दिमागी गुलामी

राहुल सांकृत्यायन

राहुल सांकृत्यायन लिखित

दिमागी गुलामी

यह पुस्तक राहुल फ़ाउण्डेशन द्वारा प्रकाशित की गई है व प्रगतिशील साहित्य के वितरक जनचेतना द्वारा कम से कम दामों में जनता तक पहुँचाई जा रही है। अगर आप पीडीएफ की बजाय प्रिण्ट कॉपी से पढ़ना चाहते हैं तो जनचेतना से खरीद सकते हैं।

ऑनलाइन लिंक : http://janchetnabooks.org/product/dimagi-gulami/

जनचेतना सम्पर्क : D-68, Niralanagar, Lucknow-226020
0522-4108495; 09721481546
janchetna.books@gmail.com
Website - http://janchetnabooks.org

इस पीडीएफ फाइल के अंत में जनचेतना द्वारा वितरित किये जा रहे प्रगतिशील, मानवतावादी व क्रान्तिकारी साहित्य की सूची भी दी गयी है।

हर दिन प्रगतिशील, मानवतावादी साहित्य पाने के लिए

- सुबह-सुबह प्रगतिशील कविताएं, कहानियां, उपन्यास, गीत-संगीत
- देश के महान क्रान्तिकारियों भगतसिंह, राहुल, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि का साहित्य पीडीएफ में
- देश-दुनिया की हर महत्वपूर्ण घटना पर मजदूर वर्गीय दृष्टिकोण से लेख
- हर रविवार किसी महत्वपूर्ण पुस्तक की पीडीएफ

मजदूर बिगुल व्हाटसएप्प चैनल से जुड़ने के लिए इस लिंक का इस्तेमाल करें

www.mazdoorbigul.net/whatsapp

जुड़ने में समस्या आने पर अपना नाम और जिला लिखकर इस नम्बर पर भेज दें – 9892808704

वैकल्पिक नम्बर : 9619039793

फेसबुक पेज : fb.com/unitingworkingclass

टेलीग्राम चैनल : www.t.me/mazdoorbigul

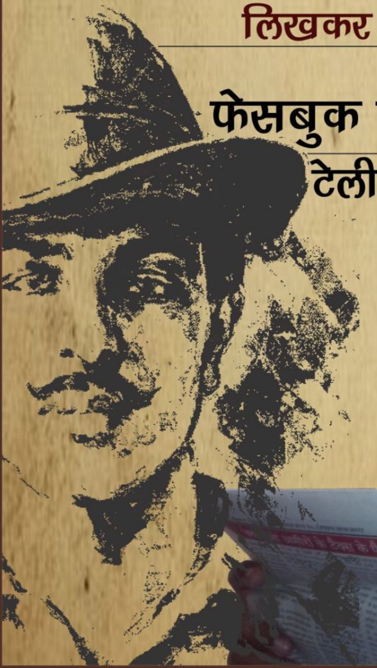

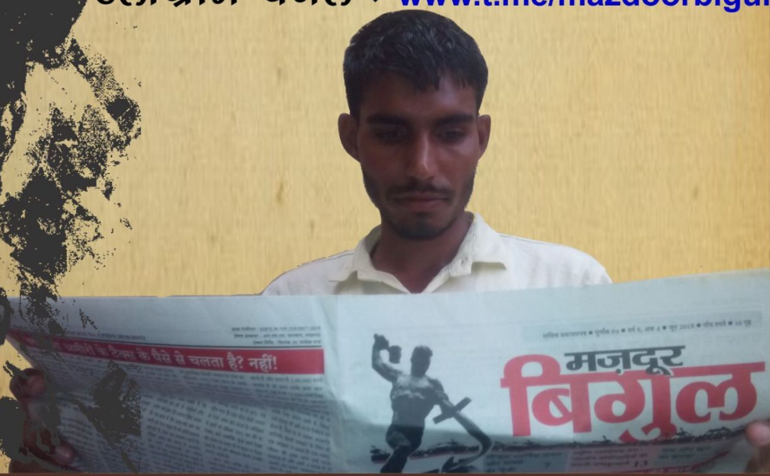

दिमागी गुलामी

दिमागी गुलामी

राहुल सांकृत्यायन

राहुल फ़ाउण्डेशन
लखनऊ

ISBN 978-81-87728-69-6

मूल्य : रु. 35.00

पहला संस्करण : जनवरी, 2006
पहला पुनर्मुद्रण : जनवरी, 2010
दूसरा पुनर्मुद्रण : सितम्बर, 2011

प्रकाशक **: राहुल फ़ाउण्डेशन**
69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज,
लखनऊ–226 006 द्वारा प्रकाशित

आवरण **: रामबाबू**

टाइपसेटिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फ़ाउण्डेशन

मुद्रक : क्रिएटिव प्रिण्टर्स, 628/एस–28, शक्तिनगर, लखनऊ

Dimagi Gulami *by* ***Rahul Sankritayayan***

प्रकाशकीय

महापण्डित महाविद्रोही राहुल सांकृत्यायन की परम्परा सतत प्रगति और प्रयोग, यथास्थिति-विरोध तथा सामाजिक-सांस्कृतिक क्रान्ति के अविरल प्रवाह एवं जनता से अटूट जुड़ाव की परम्परा है। निरन्तर गति और सतत प्रगति ही राहुल के जीवन का सारतत्त्व है। नकारात्मक परम्पराओं पर प्रचण्ड प्रहार और रूढ़िभंजन राहुल के चिन्तन का केन्द्रबिन्दु है। तर्क और विज्ञान में उनकी आस्था अटूट थी। हर तरह की शिथिलता, गतिरोध, कूपमण्डूकता, अन्धविश्वास, तर्कहीनता, यथास्थितिवाद, पुनरुत्थानवाद और अतीतोन्मुखता के वे कट्टर शत्रु थे। शब्द और कर्म – सिद्धान्त और व्यवहार की एकता की वे प्रतिमूर्ति थे। वे एक सच्चे और निर्भीक क्रान्तिकारी बुद्धिजीवी थे। 'भागो नहीं दुनिया को बदलो' – यह उनके जीवन का सूत्र वाक्य था। दार्शनिक, विचारक, इतिहासकार, पुरातत्त्ववेत्ता, साहित्यकार, भाषाशास्त्री और मार्क्सवाद का प्रचारक होने के साथ ही राहुल एक लोकप्रिय जननेता भी थे। स्वाधीनता आन्दोलन और बिहार के किसानों के आन्दोलन में उन्होंने प्रत्यक्ष नेतृत्वकारी भूमिका निभायी।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ ज़िले के पन्दहा गाँव में 9 अप्रैल 1893 को जन्मे राहुल का बचपन का नाम केदारनाथ पाण्डेय था। बचपन में ही उन्होंने उस ठहरे, रूढ़ियों में जकड़े समाज से विद्रोह किया और घर छोड़ दिया। सनातनी हिन्दू, आर्यसमाजी और बौद्ध भिक्षु के रूप में निरन्तर सत्य और मुक्तिमार्ग की खोज में जारी उनकी यात्रा उन्हें मार्क्सवादी विचारधारा तक ले गयी। गेरुआ चोला उतारकर उन्होंने मज़दूरों, किसानों के लिए लड़ने और उनके दिमागों पर कसी बेड़ियों को तोड़ डालने को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया।

राहुल अनेक भाषाएँ जानते थे। इतिहास, दर्शन और भाषा से लेकर दर्जन-भर विषयों के किसी भी पहलू पर ऐसी किताबें लिख सकते थे जो उन्हें शोहरत की चोटी पर पहुँचा सकती थीं। लेकिन आरामदेह कमरों और बड़े-बड़े पुस्तकालयों में बैठकर भारी-भारी पोथियाँ लिखने के बजाय उन्होंने ऐसा रास्ता चुना जो गाँवों की धूल और धूप भरी पगडण्डियों की ओर जाता था। जिस समय ज़रा-से इशारे-भर

से राहुल को कोई भी पद–ओहदा–पुरस्कार मिल सकता था, उस समय वे बिहार और उत्तर प्रदेश के गाँवों में घूम–घूमकर किसान सभा खड़ी करने में जुटे थे। जब दुनिया के कई मुल्कों की सरकारें उन्हें अपने यहाँ ऊँचे पद देकर बुला रही थीं, तब वह अमवारी में किसानों की अगुवाई करते हुए पुलिस की लाठी खा रहे थे।

वह चाहते तो विद्वत्ता से भरे अनमोल ग्रन्थ रच सकते थे जो उन्हें दुनिया में चोटी के विद्वानों में ऊँचा स्थान दिलाते, लेकिन मेहनतकश जनों की मुक्ति के विचार को अपना लेने के बाद उन्होंने अपनी अपार प्रतिभा का बड़ा हिस्सा जनता को जगाने के लिए सीधी–सरल भाषा में छोटी–छोटी पुस्तकें, कहानियाँ, नाटक आदि लिखने में लगा दिया। **भागो नहीं, (दुनिया को) बदलो, नइकी दुनिया, मेहरारुन के दुरदसा, दिमागी गुलामी, तुम्हारी क्षय, साम्यवाद ही क्यों** जैसी पुस्तिकाएँ लिखकर राहुल ने भारतीय समाज की हर बुराई, हर क़िस्म की दिमाग़ी गुलामी, हर तरह के अन्धविश्वास, तमाम ग़लत परम्पराओं पर करारी चोट की और मुक्ति के विचार को आम जन की भाषा में प्रस्तुत किया। इतिहास की प्रगति को रोकने वाली नकारात्मक परम्पराओं पर प्रचण्ड प्रहार करना और रूढ़ियों की धज्जियाँ उड़ा देना राहुल के चिन्तन का केन्द्रबिन्दु था। हर तरह की शिथिलता, गतिरोध, कूपमण्डूकता, अन्धविश्वास, तर्कहीनता, यथास्थितिवाद, पुनरुत्थानवाद और आगे के बजाय पीछे देखते रहने के वे कट्टर शत्रु थे।

उन्होंने अपना जीवन जनमुक्ति लक्ष्य के लिए होम कर दिया। जीवन छोटा था, काम बहुत अधिक था। सदियों से सोये भारतीय समाज को जगाना आसान नहीं था। बाहरी दुश्मन से लड़ना आसान था, पर अपने समाज में बैठे दुश्मनों और ख़ुद अपने भीतर पैठे हुए संस्कारों, मूल्यों, रिवाज़ों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए लोगों को तैयार करना उतना ही कठिन था। राहुल को सदा एक बैचेनी घेरे रहती। कितना काम पड़ा है! कैसे होगा यह सब! एक साथ दो–दो किताबें लिखने में जुट जाते। ट्रेन में चलते हुए, सभाओं के बीच मिलने वाले घण्टे–आध घण्टे के अन्तराल में, या सोने के समय में भी कटौती करके वह लिखते रहे। लगातार काम से उनका सुन्दर, लम्बा, बलिष्ठ शरीर जर्जर हो गया। पर वह रुके नहीं। आख़िरी दिनों में तो वह दर्द से फटते माथे पर कसकर पट्टी बाँधकर तीन कमरों में बैठे तीन साथियों को टहल–टहलकर एक साथ तीन–तीन किताबें लिखवाते थे। यह सिलसिला तब तक चला जब मस्तिष्क पर पड़ने वाले भीषण दबाव से उन्हें स्मृतिभंग नहीं हो गया। याद ने साथ छोड़ दिया।

राहुल का जीवन एक सतत यात्रा थी। यह कहना बिल्कुल सही है कि जिस प्रकार उनके पाँव कभी नहीं रुके उसी प्रकार उनकी कलम भी निरन्तर चलती रही। विभिन्न विषयों पर उन्होंने डेढ़ सौ से अधिक पुस्तकें लिखीं जिनमें से कई

अब भी अप्रकाशित हैं। अनगिनत लेख, निबन्ध और भाषण इसके अलावा हैं। बौद्ध दर्शन की अनेक दुर्लभ कृतियों को वे अथक परिश्रम से सामने लाये जो अब तक अप्रकाशित हैं।

'दिमागी गुलामी' नाम की इस छोटी–सी पुस्तिका में राहुल ने अपनी मारक और विचारोत्तेजक शैली में देश के पिछड़े सामाजिक जीवन के कुछ पहलुओं पर विचार किया है। आज से ठीक पचास वर्ष पहले लिखी गयी यह पुस्तिका कई मायनों में आज भी प्रासंगिक है। इसका पुनर्प्रकाशन अतीत की स्मृतियों से प्रेरणा लेने और अपनी गौरवशाली परम्परा से जुड़कर उसकी अधूरी राह पर आगे बढ़ने के प्रयास में मदद करेगा, यह हमारा विश्वास है।

आज जब सर्वग्रासी संकट से ग्रस्त हमारा समाज गहरी निराशा, गतिरोध और जड़ता के अँधेरे गर्त में पड़ा हुआ है, जहाँ पुरातनपन्थी मूल्यों–मान्यताओं और रूढ़ियों के कीड़े बिलबिला रहे हैं, तो राहुल का उग्र रूढ़िभंजक, साहसिक और आवेगमय प्रयोगधर्मा व्यक्तित्व प्रेरणा का स्रोत बनकर सामने आता है। आज राहुल की वैज्ञानिक जीवनदृष्टि के अथक प्रचारक व्यक्तित्व से सीखने की ज़रूरत है, उनकी लोकोन्मुख तर्कपरकता से सीखने की ज़रूरत है, उनके जैसे सकर्मक इतिहास–बोध से लैस होने की ज़रूरत है और सिद्धान्त और व्यवहार में वैसी एकता क़ायम करने की ज़रूरत है। आज जिस नये क्रान्तिकारी पुनर्जागरण और प्रबोधन की ज़रूरत है, उसकी तैयारी करते हुए राहुल जैसे इतिहास–पुरुष का व्यक्तित्व हमारे मानस को सर्वाधिक आन्दोलित करता है।

विषय-सूची

1 दिमागी गुलामी 11

2 गाँधीवाद 17

3 हिन्दू-मुस्लिम समस्या 25

4 शिक्षा में आमूल परिवर्तन.................................... 30

5 नव-निर्माण... 37

6 जमींदारी नहीं चाहिए.. 44

7 किसानो सावधान! 49

8 अछूतों को क्या चाहिए?...................................... 53

9 खेतिहर-मजदूर.. 57

10 रूस में ढाई मास.. 60

1
दिमागी गुलामी

जिस जाति की सभ्यता जितनी पुरानी होती है, उसकी मानसिक दासता के बन्धन भी उतने ही अधिक होते हैं। भारत की सभ्यता पुरानी है, इसमें तो शक ही नहीं और इसलिए इसके आगे बढ़ने के रास्ते में रुकावटें भी अधिक हैं। मानसिक दासता प्रगति में सबसे अधिक बाधक होती है।

हमारे कष्ट, हमारी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्याएँ इतनी अधिक और इतनी जटिल हैं कि हम तब तक उनका कोई हल सोच नहीं सकते जब तक कि हम साफ-साफ और स्वतन्त्रतापूर्वक इन पर सोचने का प्रयत्न न करें। वर्त्तमान शताब्दी के आरम्भ में भारत में राष्ट्रीयता की बाढ़-सी आ गयी, कम से कम तरुण शिक्षितों में। यह राष्ट्रीयता बहुत अंशों में श्लाघ्य रहने पर भी कितने ही अंशों में अन्धी राष्ट्रीयता थी।

झूठ-सच जिस तरीके से भी हो, अपने देश के इतिहास को सबसे अधिक निर्दोष और गौरवशाली सिद्ध करने अर्थात अपने ऋषि-मुनियों, लेखकों और विचारकों, राजाओं और राज-संस्थाओं में बीसवीं शताब्दी की बड़ी से बड़ी राजनीतिक महत्त्व की चीजों को देखना हमारी इस राष्ट्रीयता का एक अंग था। अपने भारत को प्राचीन भारत और उसके निवासियों को हमेशा से दुनिया के सभी राष्ट्रों से ऊपर साबित करने की दुर्भावना से प्रेरित हो हम जो कुछ भी अनाप-शनाप ऐतिहासिक खोज के नाम पर लिखें, उसको यदि पाश्चात्य विद्वान न मानें तो झट से फतवा पास कर देना कि सभी पश्चिमी ऐतिहासिक अंग्रेजी और फ्रांसीसी, जर्मन और इटालियन, अमेरिकन और रूसी, डच और जेकोस्लाव सभी बेईमान हैं, सभी षड्यन्त्र करके हमारे देश के इतिहास के बारे में झूठी-झूठी बातें लिखते हैं। वे हमारे पूजनीय वेद को साढ़े तीन और चार हजार वर्षों से अधिक पुराना नहीं होने देते (हालाँकि वे ठीक एक अरब बानवे वर्ष पहले बने थे)। इन भलेमानसों के खयाल में आता है कि अगर किसी तरह से हम अपनी सभ्यता, अपनी पुस्तकों और अपने ऋषि-मुनियों को दुनिया में सबसे पुराना साबित कर दें, तो हमारा काम

बन गया।

शायद दुनिया हमारे अधिकारों की प्राचीनता को देखकर बिना झगड़ा-झंझट के ही हमें आजाद हो जाने दे, अन्यथा हमारे तरुण अपनी नसों में उस प्राचीन सभ्यता के निर्माताओं का रक्त होने के अभिमान में मतवाले हो जायें और फिर अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी भी उनके बायें हाथ का खेल बन जाये, और तब हमारे देश को आजाद हो जाने में कितने दिन लगेंगे? आज हमारे हाथ में चाहे आग्नेय अस्त्र न हों, नयी-नयी तोपें और मशीन गन न हों, समुन्दर के नीचे और हवा के ऊपर से प्रलय का तूफान मचाने वाली पनडुब्बियाँ और जहाज न हों, लेकिन यदि हम राजा भोज के काठ के उड़ने वाले घोड़े और शुक्रनीति में बारूद साबित कर दें तो हमारी पाँचों अँगुलियाँ घी में। इस बेवकूफी का भी कहीं ठिकाना है कि बाप-दादों के झूठ-मूठ के ऐश्वर्य से हम फूले न समायें और हमारा आधा जोश उसी की प्रशंसा में खर्च हो जाये।

अपने प्राचीन काल के गर्व के कारण हम अपने भूत के स्नेह में कड़ाई के साथ बँध जाते हैं और इससे हमें उत्तेजना मिलती है कि अपने पूर्वजों की धार्मिक बातों को आँख मूँदकर मानने के लिए तैयार हो जायें। बारूद और उड़नखटोला में तो झूठ-साँच पकड़ने की गुंजाइश है, लेकिन धार्मिक क्षेत्र में तो अँधेरे में काली बिल्ली देखने के लिए हरेक आदमी स्वतन्त्र है। न यहाँ सोलहों आना बत्तीसों रत्ती ठीक-ठीक तौलने के लिए कोई तुला है और न झूठ-साँच की कोई पक्की कसौटी। एक चलता-पुर्जा बदमाश है। उसने अपने कौशल, रुपये-पैसे और धोखेधड़ी और तरह-तरह के प्रलोभन से कुछ स्वार्थियों या आँख के अन्धे गाँठ के पूरों को मिलाकर एक नकटा पन्थ कायम कर दिया और फिर लगी हजारों छोटी-मोटी, शिक्षित और मूर्ख, काली और सफेद भेड़ें हा-हा कर नाक कटाने। जिन्दगी-भर वह बदमाश मौज करता रहा। मरने के बाद उसके अनुयायियों ने उसे और ऊँचा बढ़ाना शुरू किया। अगर उस जमात को कुछ शताब्दियों तक अपने इस प्रचार में कामयाबी मिली तो फिर वह धूर्त दुनिया का महान पुरुष और पवित्र आत्मा प्रसिद्ध हो गया।

पुराने वक्त की बातों को छोड़ दीजिये। मैंने अपनी आँखों से ऐसे कुछ आदमियों को देखा है जिनमें कुछ मर गये हैं और कुछ अभी तक जिन्दा हैं। उनका भीतरी जीवन कितना घृणित, स्वार्थपूर्ण और असंयत था। लेकिन बाहर भक्त लोग उनके दर्शन, सुमधुर आलाप से अपने को अहोभाग्य समझने लगते थे। नजदीक से देखिये, ये धार्मिक महात्माओं के मठ और आश्रम ढोंग के प्रचार के लिए खुली पाठशालाएँ हैं और धर्म-प्रचार क्या, पूरे सौ सैकड़े नफे का रोजगार है। अधिकांश लोग इसमें अपने व्यवसाय के खयाल से जुटे हुए हैं। अयोध्या में एक महात्मा थे।

उनसे रामजी इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने स्वयं बैकुण्ठ से आकर उनका पाणिग्रहण किया। हाँ, पाणिग्रहण किया! पुरुष थे पहले, पीछे तो भगवान की कृपा से वह उनकी प्रियतमा के रूप में परिवर्तित कर दिये गये। रामजी के लिए क्या मुश्किल है। जब पत्थर मनुष्य के रूप में बदल सकता है तो पुरुष को स्त्री के रूप में बदल देना कौन–सी बड़ी बात? ऐसा–ऐसा परिवर्तन तो आजकल भी अनायास कितनी बार देखा गया है।

एक नया मत इधर 50–60 वर्ष से चला है। वह दुनिया–भर की सारी बेवकूफियों, भूत–प्रेत, जादू–मन्त्र सबको विज्ञान से सिद्ध करने के लिए तुला हुआ है। बेवकूफ हिन्दुस्तानी समझते हैं कि ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज से गदहे नहीं निकलते और सभी जैक और जानसन साइंस छोड़कर दूसरी बात ही नहीं करते। इन अधकचरे पण्डितों ने अपने अधूरे ज्ञान के आधार पर भूत–प्रेत, देवी–देवता, साधु–पूजा सबको तीस बरस पहले निकले वैज्ञानिक 'सिद्धान्तों' से सिद्ध करना शुरू किया।

हालाँकि उन सिद्धान्तों में अब 75 फीसदी गलत साबित हो गये हैं, लेकिन अभी अन्धे भक्तों के लिए उस पुराने विज्ञान के पुट से तैयार किये हुए ग्रन्थ ब्रह्मवाक्य बन रहे हैं। हिन्दुस्तान का इतिहास बहुत लम्बा–चौड़ा है ही – काल और देश दोनों के खयाल से। हमारी बेवकूफियों की लिस्ट भी उसी तरह बहुत लम्बी–चौड़ी है। अन्धी राष्ट्रीयता और उसके पैगम्बरों ने हममें अपने भूत के प्रति अत्यन्त भक्ति पैदा कर दी है और फिर हमारी उन सभी मूर्खताओं के पोषण के लिए सड़ी–गली विज्ञान की थ्योरियाँ और दिवालिये श्वेतांग तैयार ही हैं। फिर क्यों न हम अपनी अक्ल बेच खाने के लिए तैयार हो जायें? जिनके यहाँ वायुयान ही नहीं, काठ के घोड़े भी आकाश में उड़ते हों, जिनके यहाँ बारूद और आग्नेयास्त्र ही नहीं, मुख से निकली हुई ज्वाला में करोड़ों शत्रु एक क्षण में जलकर राख हो जाते हों, जिनकी सूक्ष्म दार्शनिक विवेचनाओं और आत्मवंचनाओं को सुनकर आज भी दुनिया दंग हो जाये, वह भला किसी बात को झूठा लिख सकता है? तिपाई पर भूत बुलाना, मेस्मेरिज्म, हेप्नाटिज्म आदि के द्वारा पहले वैज्ञानिक ढंग से हमें अपनी विस्तृत होती जाती बेवकूफियों के पास ले जाया गया और अब तो विज्ञान पारितोषिक विजेता लोग सरे मैदान हरसूराम और हरिराम ब्रह्म की विभूति बाँट रहे हैं। आखिर जब नोबुल पुरस्कार विजेता आलिवर आज भूतों–प्रेतों पर पुस्तकें लिख रहा है और कसम खा–खाकर लोगों में उनका प्रचार कर रहा है तो हमारे इन स्वदेशी भाइयों का कसूर ही क्या?

अभी तक शिक्षित लोग फलित ज्योतिष को झूठ समझते थे, लेकिन अब उसके भी काफी अधिक हिमायती हो चले हैं। वह इसे पक्का विज्ञान मानते हैं।

ज्योतिषियों की भविष्यवाणी को छापने के लिए हमारे अखबार एक-दूसरे से होड़ लगा रहे हैं। 27 अगस्त की 'सर्चलाइट' एक ज्योतिषी महाराज की मौसम सम्बन्धी भविष्यवाणी को एक प्रधान पृष्ठ पर स्थान देती है। फिर पूना में लाखों रुपये खर्च करके इसके लिए यन्त्र और विशेषज्ञ रखने की क्या जरूरत है? स्वदेशी का जमाना है, कांग्रेस का मन्त्रिमण्डल भी हो गया है। ज्योतिषियों को चाहिए कि एक बड़ा-सा डेपुटेशन लेकर मुख्यमन्त्रियों से मिलें। उनको विश्वास रखना चाहिए कि कांग्रेस के छह प्रान्तों में ऐसे मन्त्री बहुत कम ही होंगे जिनका ज्योतिष में विश्वास न होगा। ज्योतिषी लोग देश-सेवा के खयाल से अपना वेतन कम करने को तैयार होंगे ही, फिर क्या जरूरत है कि स्वदेशी साधन के रहते ऋतु-भविष्य-कथन के यन्त्र, भूकम्प के सिस्मोग्राफ आदि का बखेड़ा और उस पर हजार-हजार, पन्द्रह-पन्द्रह सौ रुपये महीना लेने वाले विशेषज्ञों को रखा जाये? ज्योतिषी लोग अपने काम को बड़ी सफलता के साथ कर सकते हैं। उन्हें न यन्त्रों की आवश्यकता है और न बाहर से सूचनाओं के मँगाने की। एक स्थान पर बैठे-बैठे ही वे सभी बातें बतला दिया करेंगे। फिर तारीफ यह कि एक ही आदमी अतिवृष्टि और अनावृष्टि को भी बतला देगा और भूकम्प को भी। स्वराज्य की किस्त आने-जाने में अगर कुछ देर होगी तो उसे भी नेताओं की जन्म-पत्री देखकर बतला देगा। अभी इसी साल एक महाराज बादशाह की गद्दी देखने विलायत जाना चाहते थे। दुष्ट ग्रहों की उन्हें बड़ी फिक्र थी और उनसे भी अधिक फिक्र थी उनकी माँ की। एक ज्योतिषी जी ने आकर मेष-मिथुन गिनकर महाराज को भी सन्तुष्ट कर दिया कि कोई ग्रह खिलाफ नहीं है और माँ को भी खम ठोंककर कह दिया कि महाराज को कोई अनिष्ट नहीं है, मैं जिम्मेवारी लेता हूँ। सब लोग प्रसन्न हो गये। ज्योतिषी जी को 5 हजार रुपये मिले। भला इतना सस्ता जिन्दगी का बीमा कहीं हो सकता है? ऐसा होने पर एक और फायदा होगा। हरेक प्रान्तीय सरकार में एक सरकारी ज्योतिषी और 10-5 सहायक ज्योतिषी होने पर मन्त्रियों और पदाधिकारियों को भी ज्योतिषियों के पीछे गली-गली की खाक न छाननी पड़ेगी। अपनी बीवी और छोटे-मोटे बबुआ-बबुनी सबका वर्ष-फल साल का साल पहुँचता रहेगा। स्वदेशी व्यवसाय को जरूर आपको प्रोत्साहन देना चाहिए और इससे बढ़कर शुद्ध स्वदेशी व्यवसाय और क्या हो सकता है जिसके दिल, दिमाग, शरीर और परिश्रम सभी चीजें सोलहों आने स्वदेशी हैं।

हम लोगों के मिथ्या विश्वास क्या एक-दो हैं कि जिन्हें एक छोटे से लेख में लिखा जा सके? हमारे यहाँ तो इसके मिसिल के मिसिल और फाइल की फाइल तैयार है। और तारीफ यह है कि इन बेवकूफियों के भारी-भरकम बोझ को सिर पर लादे हुए हमारे नेता लोग समुन्दर पार कर जाना चाहते हैं। उन्हें पूरा विश्वास है कि

बैकुण्ठ के भगवान, आकाश के नवग्रह और पृथ्वी के ज्योतिषी और ओझा-सयाने उनकी यात्रा में जरूर कुछ हाथ बटायेंगे।

हमारी जाति-पाँति की व्यवस्था को ही ले लीजिये। वह हमारे ऋषि-मुनियों के उन बड़े आविष्कारों में है जिन पर हमें बड़ा अभिमान है। राष्ट्रीय भावनाओं की जागृति के साथ-साथ यद्यपि कुछ इने-गिने लोग जाति-पाँति के खिलाफ बोलने लगे, लेकिन अब भी हमारे उच्चकोटि के नेताओं का अधिकांश भाग अपने ऋषियों की इस अद्‌भुत विशेषता की कद्र करने को तैयार है। नेताओं ने देख लिया कि यह जाति-पाँति, आपस के फूट, भेद-भाव के बढ़ाने का एक सबसे बड़ा कारण बन रहा है। कुछ साल पहले तो भीतर-भीतर जातीय संगठन भी इन्होंने कर रखा था और अब भी बहुतों को उसे छोड़ने में मोह लगता है। मैं अन्य नेताओं की बात नहीं कहता। मैं खास कांग्रेस के नेताओं की बात कहता हूँ। उन बेचारों को इसी कोशिश में मरना पड़ रहा है कि कैसे राष्ट्रीयता और जाति-पाँति दोनों साथ दाहिने-बायें कन्धे पर वहन किये जा सकते हैं। उनमें से कुछ ने तो जरूर समझ लिया होगा कि यह असम्भव है। शुद्ध राष्ट्रीयता तब तक आ ही नहीं सकती जब तक आप जाति-पाँति तोड़ने पर तैयार न हों। अगर आप जाति-पाँति तोड़े हुए नहीं हैं, तो आपका वास्तविक संसार आपकी जाति के भीतर है। बाहर वालों के साथ तो सिर्फ कामचलाऊ समझौता है। जब आप किसी पद पर पहुँचेंगे तो ईमानदारी रहने पर आपकी राय को प्रभावित करने में सफलता सबसे अधिक आपके जाति-भाइयों की होगी। नौकरी-चाकरी दिलाने, कमेटी, सब-कमेटी में भेजने और सिफारिशी चिट्‌ठी लिखने में मजबूरन आपको अपनी जाति का खयाल करना होगा। आदमी के दिल में हजारों कोठरियाँ जरूर हैं, लेकिन वहाँ ऐसी फर्क-फर्क कोठरियाँ नहीं हैं जिनमें एक में जाति-पाँति का भाव पड़ा रहे और दूसरे में उससे अछूती राष्ट्रीयता बनी रहे। जैसे किसानों के आन्दोलन में आने वाले समझदार आदमियों को पहले ही से तैयार होकर आना चाहिए कि उन्हें साम्यवाद में पैर रखना है, वैसे ही राष्ट्रीयता के पथ पर पैर रखने वालों को भी समझना चाहिए कि उन्हें जाति-पाँति की दीवारों को तोड़ गिराना होगा। यदि कोई आदमी राष्ट्रीय नेता रहना चाहता है और साथ ही अपने जाति-भाइयों की घनिष्ठता को कायम रखना चाहता है तो या तो वह ईमानदार नहीं रहेगा या उसे असफल होकर रहना पड़ेगा। अपनी जाति के साथ घनिष्ठता रखकर कैसे दूसरी जाति का विश्वासपात्र कोई हो सकता है? मन्त्रियों को तो खास तौर से सावधान रहना पड़ेगा। क्योंकि जाति-भाइयों की घनिष्ठता उन्हें आसानी से बदनाम कर सकती है। मेरी समझ में प्रान्त के लिए, राष्ट्र के लिए, कांग्रेस के लिए और व्यक्तिगत तौर से नेताओं के लिए अच्छा यही है कि हरेक प्रधान नेता तुरन्त से तुरन्त अपने लड़के-लड़कियों,

भतीजे–भतीजियों अथवा भाँजा–भाँजियों या नाती–नतिनियों में से कम–से–कम एक की शादी जाति–पाँति तोड़कर दिखला दे, जैसा कि महात्मा गाँधी जी तथा राजगोपालाचारी ने करके दिखाया।

आँख मूँदकर हमें समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए। हमें अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक–एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिए। बाहरी क्रान्ति से कहीं ज्यादा जरूरत मानसिक क्रान्ति की है। हमें दाहिने–बायें, आगे–पीछे दोनों हाथ नंगी तलवार नचाते हुए अपनी सभी रूढ़ियों को काटकर आगे बढ़ना चाहिए। क्रान्ति प्रचण्ड आग है, वह गाँव के एक झोपड़े को जलाकर चली नहीं जायेगी। वह उसके कच्चे–पक्के सभी घरों को जलाकर खाक कर देगी और हमें नये सिरे से नये महल बनाने के लिए नींव डालनी पड़ेगी।

* * *

2

गाँधीवाद

पिछले सोलह वर्षों से भारत में गाँधीवाद की बड़ी धूम है और प्रान्तों में अधिकांश लोग गाँधीवाद के बहुत कम अंशों से सहमत हैं, लेकिन बिहार में गाँधीवाद का एकमात्र साम्राज्य समझा जाता है। बिहार पहले से भी बंगाल के अधीन रहने के कारण सब बातों में परमुखापेक्षी रहा है, नौकरी-चाकरी, वकील-बैरिस्टर, प्रोफेसर और अध्यापक सभी जगह पर उनकी संख्या और प्रभाव नगण्य-सा रहा है। वैसे तो मातृभाषा हिन्दी युक्त प्रान्त जैसे दूसरे प्रान्तों में भी दासी के ही तौर पर कचहरियों और सरकारी दफ्तरों में रखी गयी थी, लेकिन बिहार में तो उसकी दशा और भी दयनीय रही। जहाँ और हिन्दी भाषा-भाषी प्रान्तों में सरकार से न सही, प्राइवेट संस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा हिन्दी के हक की पूरी हिमायत की गयी, वहाँ बिहार में उसकी तरफ बहुत कम खयाल रखा गया। यूनिवर्सिटी के ग्रेजुएट जो कलकत्ता विश्वविद्यालय के होते थे, अव्वल तो उनमें साहित्यिक रुचि होने नहीं पाती थी और यदि किसी को हुई तो उसे बँगला साहित्य के बारे में जानने के लिए अधिक सुविधा थी। बिहार के जमींदार तो सबसे निकम्मे, असंस्कृत और संसार की प्रगति से अनभिज्ञ रहते आये हैं। उनसे इस क्षेत्र में कोई आशा करना दुराशा मात्र था। यही कारण है जिन्होंने बिहारियों को लजालू, संकोची और सार्वजनिक स्थानों में बोलने-चालने तथा अपने को आगे लाने में भीरु बना दिया। किसी भी उन्नतिशील जाति के लिए जिन गुणों की आवश्यकता है, उनकी बिहारियों में कमी नहीं है।

यदि आप बिहार में 1921 में असहयोग करके आये हुए छोटे-बड़े कार्यकर्त्ताओं की ओर दृष्टि डालें और उनकी तुलना दूसरे प्रान्तों से करें तो मालूम होगा कि बिहारी असहयोगियों ने जिस आदर्श के लिए अपनी वैयक्तिक उच्चाकांक्षाओं का त्याग किया, वे उस आदर्श पर बहुत अधिक संख्या में कायम रहे। यह बहुत आसानी से समझा जा सकता है कि अपने आदर्श के लिए त्याग करने में बिहारियों में स्थिरता इतनी रही है जितनी शायद ही भारत के किसी प्रान्त

में रही हो। त्याग की स्थिरता के साथ बिहारियों में एक और सबसे अच्छा गुण रहा है कि नेता बनने के लिए यहाँ उतने झगड़े नहीं हुए। इस प्रकार वैयक्तिक उच्चाकांक्षा की कमी भी उनके अच्छे गुणों में है। मतभेद रखते हुए भी बिहारी राष्ट्रकर्मी अनुशासन को बराबर मानते आये हैं। बिहार के साम्यवादी भी जो बहुत-सी बातों में क्या, प्राय: ही मौलिक बातों में राजेन्द्र बाबू से मतभेद रखते हैं, लेकिन तब भी वे उनका बड़ा सम्मान करते हैं और बहुत हद तक आज्ञा के अनुसार चलने के लिए तैयार रहते हैं।

राजेन्द्र बाबू के बारे में भी यह कहना पड़ेगा कि वे अपने से मतभेद रखने वालों की बातें भी बराबर ध्यान से सुनने और जहाँ तक हो सके, मतभेद को मिटाने की कोशिश करते हैं। यदि किसी बात में दोनों की राय में फर्क हो तो भी उसमें कड़वाहट आने नहीं देना चाहते। स्थिर त्याग, वैयक्तिक महत्त्वाकांक्षा पर संयम और बड़ों का अनुशासन, ये तीनों बातें किसी भी जाति की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं और ये तीनों बहुत प्रचुर परिमाण में बिहारियों में मौजूद हैं।

इतिहास को देखने से मालूम होगा कि बिहार कोने में छिपी रहने वाली चीज न था। हिन्दूकश से आसाम और हिमालय से कन्याकुमारी तक विस्तृत एक राष्ट्र का बनाना और उसको शताब्दियों तक सफलतापूर्वक चलाना बिहारियों का ही काम था। वस्तुत: यदि देखा जाये तो मालूम होगा कि पाटलिपुत्र (पटना) जब से राष्ट्रकेन्द्र नहीं रहा, तब से सारा भारत फिर एक राष्ट्रीय सूत्र में बँध न सका।

ऐसे काम के लिए बिहार अगुवा बना था, फिर वह लजालू, संकोची और सभा-समाज में भीरु जैसी सूरत बनाकर रह ही कैसे सकता था। मैं मानता हूँ कि ये बातें इसके दोष हैं और ये उसकी प्रकृति से सम्बद्ध नहीं हैं, इसका साक्षी तो इतिहास है। हाँ, पिछली डेढ़ शताब्दियों में कुछ ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुईं जिनसे बिहारियों में ये बातें आ गयीं। अब हमें उन्हें हटाने की कोशिश करनी चाहिए।

शायद ये दोष आसानी से रह भी जाते, किन्तु गाँधीवाद ने अपने प्रभाव से इसे और पक्का करना चाहा। मुँह सूखा, आँखें मुर्झायीं, सिर नीचे झुका, छाती पैर की ओर दबी, यही तो गाँधीवाद का आकार लोगों के सामने आता है। और उसने अपने भक्त बिहारियों पर यदि यह छाप छोड़नी चाही तो इसमें आश्चर्य ही क्या।

गाँधीवाद ने भारतीय इतिहास में सबसे उल्लेखनीय महत्त्व की जो बात की, वह है साधारण जनता तक क्रान्ति के सन्देश को पहुँचाना और उसके लिए स्वार्थ-त्याग का भाव पैदा करना। यह मामूली बात नहीं है और इसके लिए इतिहास हमेशा गाँधी जी का नाम आदर और अभिमान के साथ लेगा। लेकिन

उसके साथ ही उसने राष्ट्र का सबसे बड़ा अपकार भी किया है और वह है, हमारी पुरानी बेवकूफियों के प्रति गाढ़ी श्रद्धा पैदा कर देना। यह मानता हूँ कि इतिहास में पहली ही बात स्थायी होकर रहेगी। दूसरी बात को शायद एक शताब्दी के भीतर ही लोग भूल जायेंगे, लेकिन इस वक्त और अभी दस–बीस वर्ष तक हमारे राष्ट्र को इसका फल भोगना पड़ेगा।

सबसे बड़ी बेवकूफी जिसे गाँधीवाद ने सहारा और उत्तेजना दी है, वह धर्म की कट्टरता है। लोग कहेंगे कि गाँधी जी ने अछूतोद्धार–जैसे आन्दोलन उठाकर धर्म के विचारों में भी तो क्रान्ति पैदा की है। अछूतोद्धार तो मालवीय जी भी अपने ढंग से करना चाहते हैं और साथ में हिन्दू यूनिवर्सिटी में बीस लाख रुपया लगाकर एक नया विश्वनाथ तैयार करना चाहते हैं। क्या यह बीसवीं शताब्दी के सबसे बड़े हिन्दू नेता की सबसे बड़ी बेवकूफी नहीं है? गाँधी जी के अछूतोद्धार का महत्त्व बहुत घट जाता है जब हम उसके साथ ऋषि–मुनियों और उनके ग्रन्थ गीता आदि के गौरव को उनके द्वारा खूब बढ़ाया जाता देखते हैं। जिन ग्रन्थों में अछूतपने की बात भरी पड़ी है और जिन ऋषि–मुनियों ने अपने आश्रमों के आसपास मनुष्य नामधारी दास–दासियों के ऊपर सहस्राब्दियों तक अमानुषिक अत्याचार होते देखकर भी अपनी तपस्या भंग न की, उनके ग्रन्थ अछूतोद्धार के बाधक छोड़ साधक कैसे हो सकते हैं? गाँधीजी विपक्ष में जाने वाले वाक्य की नयी व्याख्या कर अपना काम चलाना चाहते हैं।

भारत में पहले भी ऐसे कुछ सुधारक हुए हैं जिनके काम करने का यही ढंग था। लेकिन यह तो नासूर पर ऊपरी मरहम–पट्टी है। यही शास्त्र और ऋषि–मुनियों के प्रति गौरव तो और भी अछूतपने की नींव को मजबूत करने के कारण बने हैं और गाँधी जी चाहते हैं कि शास्त्र और ऋषि–मुनियों के गौरव में भी कोई बट्टा न आने पाये और साथ ही मुनियों का यह सबसे बड़ा अत्याचार भी हमारे समाज से विदा हो जाये।

अपने वचन और आचार द्वारा नहीं, बल्कि प्रार्थना–सम्मेलनों के प्रदर्शन से भी उन्होंने ईश्वर–भक्ति की बहुत पुष्टि की है। मनुष्यों की असमानता – आर्थिक और सामाजिक दोनों ही तथा रूढ़ियों के पोषण में ईश्वर का खयाल सबसे अधिक सहायक साबित हुआ है। संसार के हर समय के हरेक क्रान्तिकारी इस बात को अच्छी तरह जानते थे और इसलिए उनके यहाँ ईश्वर के लिए स्थान नहीं दिया गया। गाँधीजी एक तरफ तो संसार को बनाने–बिगाड़ने वाला ईश्वर को कहते हैं और दूसरी तरफ मनुष्य को भी अपने भविष्य के लिए उद्योग करने की शिक्षा देते हैं। निश्चय ही स्वार्थियों, ढोंगियों और सोचने की ताकत खो दिये हुए दिमागों को गाँधी जी की ईश्वर–भक्ति से बहुत सहायता मिलती है। लेकिन राष्ट्र की जो

कठिनाइयाँ और दुःख हैं, वे सच्चे हैं, काल्पनिक नहीं। ईश्वर-भक्ति उसे भुला देने में सहायक हो सकती है, लेकिन हरेक पेचीदा प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने में बाधक भी बहुत होती है। हमारे राष्ट्रीय नेताओं को जेल में वर्ष-वर्ष तक का निश्चिन्त समय मिला था। यदि वे चाहते तो इस समय को बहुत आसानी से भारत की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं को हल करने के विचार में तथा तत्सम्बन्धी विशाल साहित्य के अध्ययन में लगा सकते थे, लेकिन सामने तो गाँधी जी का सतयुग और राम-राज्य था। उनको आजकल के शैतानी साहित्य - अर्थशास्त्र और साइंस - से क्या प्रयोजन? कोई गीता की एक आवृत्ति रोज कर लेता था? बिहार के कुछ सम्भ्रान्त नेता तो इस बड़ी खोज में लगे हुए थे कि अट्ठारहों अध्याय गीता में 'क' कितनी बार आया है और 'ष' कितनी बार। उनको लिखने-पढ़ने से क्या मतलब? जिन्होंने 1921 ई. में कालेज छोड़ा, उनके लिए विज्ञान और विद्या उन्हीं के विद्यार्थी जीवन में अपनी चरम सीमा तक पहुँच गयी थी।

पिछले सोलह-सत्रह वर्षों में मनुष्य का दिमाग सिवाय बेवकूफी के, क्या कोई गम्भीर विचार या साहित्य निकाल पाया है? मुश्किल तो यह है कि उन्होंने कालेज में जो पढ़ा था, उसे भी वहीं कालेज के दरवाजे पर झाड़कर चले आये थे। क्या वे जानते नहीं थे कि उन्हें एक समय गवर्नमेण्ट की बागडोर अपने हाथ में सँभालनी पड़ेगी। उस वक्त गीता और रामायण से काम नहीं चलेगा? उस समय विज्ञान की हरेक शाखा का, जिसका राजनीति से घनिष्ठ सम्बन्ध है, ज्ञान आवश्यक होगा। और ऐसा न करने पर कांग्रेसी मन्त्रियों को भी अपने विभाग के पदाधिकारियों के हाथ में रहना पड़ेगा, क्योंकि जहाँ वे पदाधिकारी अपने विषय के विशेषज्ञ होंगे, हरेक बात को आँकड़ों, योजनाओं और सिद्धान्तों के साथ-साथ पोथी की पोथी पेश कर सकेंगे, वहाँ हमारे मन्त्री लोग फाइल पर सिर्फ दस्तखत कर देने की शक्ति रखेंगे और ज्यादा हुआ तो कुछ उलटे-सीधे सभा में अपने क्रान्तिकारी और आदर्शवाद तथा त्याग पर व्याख्यान झाड़ देंगे। निश्चय ही यह आसान काम है, क्योंकि न इसमें बहुत दिमाग खर्च करने की जरूरत है, न पढ़ने-लिखने की। हमारे नेताओं में इस शोचनीय स्थिति के लाने की सारी जिम्मेवारी गाँधीवाद पर है और जब तक यह अन्धी भक्ति दूर नहीं होती, तब तक हमें अधिक आशा रखने का खयाल छोड़ देना चाहिए।

गाँधी जी कहते हैं कि नशा को हिन्दुस्तान से बिल्कुल विदा कर देना चाहिए। ताड़ी हो या देशी शराब और शायद गाँजा और भाँग भी, सभी को वे देश-निकाला देना चाहते हैं। सिगरेट और तम्बाकू को भी बहुत दिनों तक यहाँ न रखना चाहेंगे। यूरोपियन लोगों के लिए कुछ परिमाण में विदेशी शराब लाने की रियायत भी करने

के लिए तैयार हैं। बिहार के पाँच करोड़ के बजट में 1 करोड़ 17 लाख शराब से आता है, उसे वे एकदम कैसे बन्द कर देने की सम्मति दे रहे हैं। चाहे आपके स्कूल-कालेज बन्द हों, चाहे लड़के आधुनिक ज्ञान से वंचित हों, लेकिन वे नहीं चाहते कि शराब बेचकर मिले इस पाप के धन से विद्या पढ़कर विद्यार्थियों के दिमाग को कलुषित किया जाये। अभी कल तक गाँधी जी मिल-मालिकों, जमींदारों और बड़े-बड़े सेठ-साहूकारों को शिक्षा दे रहे थे कि हम यह नहीं चाहते कि सम्पति तुम्हारे हाथ से छीन ली जाये, हम यही चाहते हैं कि तुम अपने को गरीबों का अभिभावक और गार्जियन समझो। तो अभिभावक और गार्जियन लोग अब गाँधी जी के इस वचन के भरोसे कह सकते हैं कि हम अब अभिभावक रहना चाहते हैं। हमारे ऊपर अब कोई नया-नया टैक्स न लगाया जाये, न जमींदारी प्रथा उठायी जाये, न जमींदारों के किसी हक को छुआ जाये।

इस प्रकार आबकारी की आमदनी इस तरह से बन्द हो जायेगी और इधर अभिभावक, जमींदारों और मिल-मालिकों को गाँधी जी का वरदान मिल ही गया है। अब चलो, चुपचाप बैठे-बैठे प्रेमभवन में माला जपते रहो। ताड़ी को भी गाँधी जी शराब के साथ ही रखना चाहते हैं – ताड़ी या तो तुरन्त वृक्ष से नीचे उतरते ही पी ली जाये या उसका गुड़ बना लिया जाये, उसको एक-दो दिन भी रखने की इजाजत न दी जायेगी। नशा तो रोकना चाहिए और अफीम-जैसे नशों को रोकने के लिए अगर जबरदस्ती भी की जाये तो कोई हर्ज नहीं।

शराब जो स्वास्थ्य को तुरन्त नुकसान पहुँचाती है, उसको भी रोकना ठीक है। लेकिन सभी व्यक्तियों के लिए जिस चीज में जरा भी नशा और अलकोहल का सम्पर्क आ जाये, उन सभी को राजी-खुशी या जबरदस्ती चौबीस घण्टे के भीतर बन्द करना और उसे भी ऐसी अवस्था में जब कि प्रान्त की एक भारी आमदनी के हाथ से निकल जाने का सवाल है, कहाँ तक राजनीति समझा जायेगा? और ताड़ी को, अगर उसमें हल्का-सा नशा आ भी जाये तो भी, जब तक वह खाद्य के रूप में ताकत पहुँचा सकती है, तब तक उसे रोकने के लिए इतनी तत्परता दिखलाने की क्या आवश्यकता? ताड़ी को तो बल्कि शराब छुड़ाने के लिए साधना चाहिए, एक खास हद तक हल्का नशा आने को देख लेना चाहिए और उतने दिनों तक उसके रखने की आज्ञा देनी चाहिए जितने में एक नशा की मात्रा नियमित परिमाण से अधिक न बढ़ने पाये।

ताड़ी में बहुत पुष्टिकारक शक्ति है, देहात में कितने लोग सिर्फ स्वास्थ्य-सुधार और शरीर को मजबूत करने के लिए साल में एक-दो महीना ताड़ी पीते हैं और उनके स्वास्थ्य में प्रत्यक्ष ही सुधार देखने में आता है। ताड़ी को भी शराब और अफीम की श्रेणी में गिन लेना और फिर उसके पूर्ण बहिष्कार के लिए

जोर देना ऐसे गरीब लोगों के लिए अन्याय है जिनको उसके जरिये शारीरिक पुष्टि मिलती है। आबकारी को हटाने के लिए तीन बातों की ओर जरूर खयाल रखना होगा – एक, ताड़ी के लाभ को, जो नशा की एक खास सीमा के भीतर रखने से होता है, दूसरे, स्वाभाविक नशेबाजों को कुछ ताड़ी–जैसी चीज के जरिये अपनी पुरानी नशेबाजी से हटाने के लिए इस्तेमाल करना, तीसरे, हमें यह भी देखना होगा कि इसकी इतनी बड़ी आमदनी जिसके न होने पर हमें अपने सारे स्कूल और कालेज बन्द करने होंगे – एक–ब–एक नहीं छोड़ा जा सकता। पहले उसके लिए कोई एक रास्ता निकालिये, तब ऐसा कर सकते हैं।

अगर वैयक्तिक सम्पत्ति उठा दी गयी होती और लोगों के परिश्रम को बढ़ाकर अधिक जीवन–सामग्री पैदा की जाती तो आबकारी की आमदनी आदि का सवाल ही नहीं उठता। लेकिन गाँधी जी तो वैयक्तिक सम्पत्ति को भी शायद भगवान की आज्ञा से मिली मानते होंगे, इसलिए उस पवित्र सम्पत्ति पर वे कैसे हाथ डाल देंगे – उनका तो सीधा उत्तर है, अगर आमदनी कम हो जाती है तो शिक्षण–संस्थाएँ बन्द कर दो।

गाँधी जी यह भी कहते हैं कि पाठशालाओं को स्वावलम्बी बना दिया जाये। कौन–सी पाठशालाओं को? प्राइमरी की छह श्रेणियों को जिनमें छह से बारह वर्ष के लड़के पढ़ते हैं। हाँ, यदि गाँधी जी यह नियम बनवा दें कि लोग बीस वर्ष की उमर के बाद पाठशालाओं में जाया करें तो उस समय भले ही उनके आधे परिश्रम से पाठशालाएँ स्वावलम्बी बन जायें। छोटे बच्चे तो हमेशा माता–पिता तथा राष्ट्र के ऊपर अपने शिक्षण का भार डालेंगे।

उनका पाठशालाओं के स्वावलम्बी बनाने का खयाल तो वैसे ही है जैसे बच्चे को पैदा होते ही स्वावलम्बी होने का उपदेश दिया जाये। चाहे टैक्स से रुपया वसूल करके शिक्षा–विभाग में खर्च करें या गाँव के अध्यापक को लोगों से आटा, चावल और पैसा का चन्दा करवाया जाये, स्वावलम्बी का यहाँ खयाल ही कैसे उठता है? असल बात तो यह है कि गाँधीवाद आजकल के साइंस और विद्या की उन्नति को शैतान की खुराफात समझता है और उसके प्रचार में दिल से सहानुभूति नहीं रखता। उसके अनुसार तुलसीकृत रामायण को सुन–पढ़ लेना एक आदमी की शिक्षा के लिए काफी है। मिट्टी और पानी सभी बीमारियों के लिए रामबाण है ही। अस्पताल तोड़ देना चाहिए, डाक्टरों को बरखास्त कर देना चाहिए और मेडिकल कालेजों पर 'टुलेट' लगा देना चाहिए। वास्तव में ईश्वर–विश्वासियों के लिए इसकी है भी क्या जरूरत? 'जाको राखे साइयाँ मार न सकिहैं कोय' पक्का सिद्धान्त तो मौजूद ही है। जिसको भगवान मारना चाहते हैं, उसे डाक्टर बचा ही नहीं सकते और दु:ख–सुख भी तो भगवान का दिया हुआ है, उसको भी कौन हटा

सकता है?

कैदियों के लिए जेलखाना और शान्ति–रक्षा के लिए पुलिस की भी आवश्यकता नहीं। शायद वे समझते होंगे कि कैदखाना, जेल और पुलिस को देखकर ही मनुष्य का देवता–जैसा स्वभाव सहज ही विकृत हो जाता है। आज अगर जेल और पुलिस को हटा दिया जाये तो आपको न दरवाजे में ताला लगाने की जरूरत पड़ेगी, न घर के भीतर लोहे की तिजोरी रखनी पड़ेगी। आज हजार–दो हजार के नोट बेशक बरामदे की मेज पर रखकर बीवी–बच्चों सहित दो घण्टे शहर की सैर कर आयें। देवता–स्वरूप मनुष्य उस समय भला कभी उन कागज के टुकड़ों की ओर लोभी नजर से देख सकता है? लोभ तो जेल की वजह से है – उसी तरह जिस तरह पुलिस की लाल पगड़ी को देखते ही लोगों के हाथ एक–दूसरे का सिर फोड़ने के लिए खुजलाने लगते हैं। गाँधी जी पश्चिम के अराजकतावादियों की तरह शायद समझते हैं कि मनुष्य–समाज को न कानून की जरूरत है, न गवर्नमेण्ट की।

गाँधीवाद ने इन्द्रिय–निग्रह और ब्रह्मचर्य पर भी बहुत जोर दिया है। गाँधीजी के आश्रमों में तो इसके लिए सख्त से सख्त नियम बनाये गये हैं और शायद इन्हीं आश्रमों में इन नियमों की सबसे ज्यादा अवहेलना भी हुई है। एक बार असफल होने पर फिर प्रयत्न किया गया और इस तरह दर्जनों बार की असफलता पर भी सिद्धान्त में संशोधन की आवश्यकता न समझी गयी। एक बेचारा छोटा आदमी, जिसने हर तरह से अपने को ईमानदार साबित किया है, वह जरा–सा कठोर ब्रह्मचर्य के नियम से अगर इधर–उधर डिग जाता है, तो उसकी प्रताड़ना के लिए सारे भारत के पत्रों को खबर दे दी जाती है और पास में बैठने वाली बड़ी मछली अगर कितनी ही बार उन नियमों की अवहेलना करती है, तब उसके लिए उतनी कड़ाई करने की आवश्यकता नहीं समझी जाती। देश की जनसंख्या बढ़ती जा रही है। उसको रोकने के लिए गाँधीवाद के पास सबसे सरल नुस्खा है ब्रह्मचर्य। विवाहित होने पर भी पति–पत्नी एक–दूसरे से अलग रहें। सन्तति–निरोध तो इसकी दृष्टि में अक्षम्य अपराध है। यह तो खुलेआम व्यभिचार का प्रचार करना है। ब्रह्मचर्य ही मनुष्य के लिए स्वाभाविक चीज है और स्त्री–पुरुष का सांभोगिक सम्बन्ध तो बिल्कुल कृत्रिम चीज है। बढ़ती हुई जनसंख्या, जो भारत में बड़ा विकराल स्वरूप धारण कर रही है, उसके लिए गाँधीवाद ने यह उपाय सोच रखा है। यह ऐसा उपाय है जिसे पालन करने वाले शायद गाँधीजी के अनुयायियों में भी एक दर्जन न मिल सकेंगे, तो भी उसके बल पर हर दस वर्ष के भीतर तीन करोड़ की वृद्धि को रोकने का बीमा लिया जा रहा है। बात यह है कि गाँधीवाद का सबसे अटल विश्वास ईश्वर–भक्ति पर है। वह समझता है कि जो समस्याएँ मनुष्य

के लिए हल करने में तो असम्भव मालूम होती हैं, वे ईश्वर के सामने तुच्छ हैं। वह तो पलक-दरियायी है। पलक गिरने में बड़ी से बड़ी समस्याएँ हल कर सकता है। हाँ, इसमें क्या शक है! लेकिन इसके लिए हमें एक बड़े पैमाने में भूकम्प, प्लेग या इन्फ्लुएंजा की प्रतीक्षा करनी चाहिए।

किसी समस्या पर साफ-साफ न सोचना, कठिनाइयों को अदृश्य और अप्रमाणित साधनों के ऊपर छोड़े रखना, बस यही गाँधीवाद का असली रूप है।

* * *

3

हिन्दू-मुस्लिम समस्या

हिन्दू–मुस्लिम समस्या हिन्दुस्तान में एक न हल होने लायक प्रश्न समझी जाती है। अगर उसके कारणों पर दृष्टिपात करें, तो पायेंगे कि इस विभेद की बुनियाद किसी मजबूत पत्थर पर नहीं है। कोई आर्थिक प्रश्न ऐसा नहीं जो इस समस्या की जड़ में हो और आर्थिक प्रश्न ही किसी बात को मजबूत बनाता है। यह सारा झगड़ा मध्यवर्ग और उच्चवर्ग का बनाया हुआ है; बल्कि उच्चवर्ग या राजा–नवाब लोगों का। हिन्दू–मुस्लिम प्रश्न के साथ घनिष्ठता पैदा करना तो सिर्फ साधारण जनता को अपने जाल में फँसाने के लिए है। आप जमींदारों की सभा की ओर देख लीजिये। उनमें सभी महाराज, नवाब, रायबहादुर, खाँबहादुर सगे भाई–से मालूम होंगे। असल में उनमें तो आपस में कोई उस तरह का न भेद है और न हिन्दू–मुस्लिम झगड़ों से उनका कोई नुकसान होता है। मरते और जेल जाते हैं तो साधारण गरीब लोग।

जमींदार और बड़े–बड़े धनी लोग बहुत करते हैं तो गरीब हिन्दू–मुसलमानों को एक–दूसरे के खिलाफ भड़काते रहते हैं और जब दोनों फँस जाते हैं, तो आप नौ–दो ग्यारह। इस समस्या की जड़ है किसान–मजदूरों को अपने आर्थिक स्वार्थ का ज्ञान न होना। बहिश्त और स्वर्ग के लोभ में, जो इन्हीं धनियों के पिट्ठुओं ने उन्हें दिया है, अपने उस जीवन को दुःखमय और नरक का जीवन बना रहे हैं। यदि उन्हें यह अच्छी तरह ज्ञात हो जाये कि सभी गरीबों का सवाल एक है – चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान; अगर इजाफा होता है, तो सभी गरीबों पर; यदि बेगार और नाजायज कर वसूल किये जाते हैं, तो वे भी गरीबों से ही। यदि आज जमींदारी प्रथा उठती है, तो हिन्दू–मुसलमान दोनों ही गरीबों को फायदा होगा। अगर शिक्षा अनिवार्य की जाती है, तो उससे भी दोनों ही के बच्चे लाभ उठायेंगे। यदि देश में नया समाज और नया आर्थिक संगठन किया जाता है, तो उससे सबसे बड़ा फायदा गरीबों को ही होगा। अगर इन बातों पर वे अच्छी तरह गौर करना सीख लें, तो उन्हें मालूम होगा कि एक हजार में से नौ सौ निन्नानबे आदमियों को इन

हिन्दू-मुसलमान झगड़ों से नुकसान ही होगा। झगड़ों के कारण हैं, विदेशी प्रभुओं का स्वार्थ, धनिकों का स्वार्थ और चन्द पढ़े-लिखे लोगों की नौकरी और मेम्बरी की भूख, जिससे साधारण जनता को नुकसान के सिवाय फायदा कुछ भी नहीं। जरूरत यह है कि हम सौ में निन्नानबे आदमियों के सामने रोज-ब-रोज के आर्थिक प्रश्न को रखें। साम्यवादी और किसान कार्यकर्त्ता यह दिखा दें कि हिन्दू-मुस्लिम का बिल्कुल भेदभाव नहीं है, जैसा कि जमींदार दिखलाते हैं; बल्कि जमींदारों को तो अपना ढोंग भी जनता के सामने रखना है; इसलिए कितनी ही बातों में बाहर से कम से कम थोड़ा फर्क दिखलाना चाहते हैं। लेकिन साम्यवादियों को तो कम से कम हिन्दू-मुस्लिम होने का खयाल ही मिटा देना होगा। सभी साम्यवादी कार्यकर्त्ताओं को अपना उदाहरण लोगों के सामने रखना चाहिए। एक साथ खाना-पीना तो खुल्लम-खुल्ला होना चाहिए। एक-दूसरे की भावनाओं पर, लड़कपन से आये हुए सामाजिक संस्कारों पर, खूब खुले तौर से बिना संकट के बहस करनी चाहिए। धार्मिक हो या सामाजिक, सांस्कृतिक हो या राजनीतिक, हर पहलुओं पर उन्हें निडर होकर बात करना चाहिए। इसका उन्हें खयाल ही छोड़ देना चाहिए कि उनके भाव पर शायद ठेस लगे। आजादी का प्रश्न छोड़कर साम्यवादियों के सामने न कोई बड़ा प्रश्न और न कोई बड़ा कोमल भाव।

हम जानते हैं कि साम्यवादी भी आखिर हिन्दू-मुसलमान माँ-बाप से ही पैदा हुए हैं और बच्चे पर लड़कपन में कम से कम अपने माँ-बाप का असर होना जरूरी है। वे असर तभी दूर हो सकते हैं, जब कि सामाजिक बन्धनों को तोड़ने में हम साहस से काम लें और एक-दूसरे के कोमल भावों पर खुला प्रहार करने को तैयार हों। साम्यवादियों को इसे तो पहला सामाजिक नियम बना देना चाहिए कि इसमें आने वाला आदमी हिन्दू हो या मुसलमान, छूत हो या अछूत, उसे एक साथ खाना-पीना चाहिए। उसको यह न खयाल करना चाहिए कि साधारण लोग क्या कहेंगे। किसी भी सामाजिक क्रान्ति में शामिल होने वालों को कुछ कड़वा-मीठा सहने के लिए तैयार होना ही चाहिए। लोग जेल जाने और फाँसी चढ़ जाने को बड़ी हिम्मत की बात कहते हैं। समाज की रूढ़ियों को तोड़ना और उसके द्वारा उनकी आँखों में काँटे की तरह चुभना जेल और फाँसी से भी ज्यादा साहस का काम है।

साम्यवादी एक नया संसार, एक नया समाज बनाना चाहते हैं, इसलिए उन्हें हर तरह की कुर्बानियों के लिए तैयार रहना चाहिए। अगर आप शादी-ब्याह अपनी जाति में रखना चाहते हैं, अगर आप मुण्डन और जनेऊ अपनी जाति के रिवाज के मुताबिक करना चाहते हैं, अगर आप खान-पान में स्वयंपाकी रहना चाहते हैं तो आप-जैसे साम्यवादी से साम्यवाद को नुकसान ही पहुँचेगा।

जहाँ साम्यवादियों की पार्टी का हेड क्वार्टर हो या कुछ साम्यवादी एक जगह

रहते हों, वहाँ हिन्दू–मुस्लिम बावर्चीखाना अलग नहीं रहना चाहिए। सबका खाना एक जगह बने और जो चाहे सो बनावे। और सबको एक साथ बैठकर खाना चाहिए। शायद हमारे साम्यवादी कार्यकर्त्ताओं को यह खयाल हो कि इससे कहीं जनता भड़क उठेगी, जिसमें वे काम करना चाहते हैं, लेकिन तब आपके इस कहने का मतलब होगा कि जिन रूढ़ियों को तोड़ फेंकना साम्यवाद के लिए सबसे आवश्यक चीज है, उन्हीं को आप साम्यवाद की सफलता में सहायक मानते हैं। जनता अपने असली हित को समझने की शक्ति रखती है। यदि उसको ठीक से समझाया जाये तो मैं यहाँ अपना ही एक उदाहरण देता हूँ। बहुत दिनों बाद मुझे एक परिचित गाँव में जाना पड़ा। लोगों का आग्रह हुआ कि मैं रूस के बारे में कुछ कहूँ। मैंने साधारण रूसी जनता की आर्थिक उन्नति की बात बतलायी – कैसे वहाँ के गाँव के छोटे–छोटे खेत–मेड़ तोड़कर मीलों लम्बे बना दिये गये हैं, कैसे छोटे–छोटे टटुओं की जगह एक हाथ गहरा खोदने वाले सात–सात फारों के मोटर वाले हल एक के पीछे पचास, खेतों में चलते दिखलायी पड़ते हैं, कैसे गाँव के स्त्री–पुरुष, श्रमिक अपने सम्मिलित खेतों पर मोटर–हलों पर बैठे झण्डे और जयनाद के साथ खेतों पर पहुँचते हैं, कैसे हवाई जहाज उड़कर मीलों लम्बे खेतों में बीज बोते हैं; कैसे मशीनें ही खेतों को काटती हैं, कैसे फसल को दबाती हैं, किस तरह खेतों पर भी भोजन के वक्त सैकड़ों किसान काम छोड़ कर एक जगह जमा होते हैं, भोजन परोसा जाता है और साथ–साथ लोग रेडियो का गाना भी सुनते हैं, कैसे गाँव एक–दूसरे से जुताई, खेत बोने और अनाज को अधिक परिमाण में पैदा करने में होड़ लगाते हैं, कैसे किसी गाँव का काम पिछड़ जाने पर दूसरे गाँव वाले गोल बाँधकर मदद देते और उन्हें लज्जित करते हैं, कैसे गाँव की छोटी–छोटी झोपड़ी हटाकर चौड़ी सड़कों के किनारे ईंट–चूने के मकान किसान बना रहे हैं जिसमें पानी के नल, बिजली की रोशनी, नागरिकों की चीजें पहुँच रही हैं, कैसे हर एक गाँव में स्कूल, अस्पताल और सिनेमा जारी रहता है, कैसे हर एक गाँव के श्रमिक स्त्री–पुरुष अपने पुस्तकालय, क्लबों और नाट्यशाला में नियमपूर्वक पहुँचते हैं, कैसे लोगों को दिन में छह–सात घण्टा काम करना पड़ता है और इतने ही में सुसंस्कृत जीवन बिताने की हर एक सामग्री को वे आसानी से पा सकते हैं, कैसे वहाँ लड़के–लड़कियों को पढ़ाने तथा परवरिश करने का सबसे अधिक भार साम्यवादी सरकार अपने हाथ में लेती है, मानो पिता को न शादी की फिक्र है, न लड़के के लिए कुछ विरासत दे जाने की, कैसे यदि कोई बीमार या बूढ़ा हो तो उस व्यक्ति के भरण–पोषण का सम्मानपूर्वक इन्तजाम सरकार शुरू करती है, कैसे वहाँ के लोगों की चिन्ता अब हजार हिस्से में एक हिस्सा रह गयी है।

उस सभा में हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मण और चमार सभी थे। मैंने देखा कि सभी

के चेहरे पर प्रसन्नता की रेखा दिखलायी पड़ती है। तब मैंने कहा, लेकिन रूस में बहुत–सी खराब बातें भी हुई हैं, वहाँ घुरहू तिवारी की लड़की को मँगरू चमार का लड़का सरेआम ब्याह कर लेता है और उसमें कोई बाधक नहीं हो सकता। वहाँ खाने–पीने में जात–पाँत का सवाल नहीं है। मँगरू चमार अगर रसोई अच्छी बनाना जानता है, तो वही बनायेगा और गाँव के ब्राह्मण, राजपूत, सबको एक साथ बैठकर खाना पड़ेगा। अगर बड़ी जाति वालों ने जरा–सी आनाकानी की, तो बहुत सम्भव है कि उन्हें देश से निकाल दिया जाये, धर्म और ईश्वर के लोग विरोधी बना दिये गये हैं, हजारों मन्दिरों और मस्जिदों की वर्षों से मरम्मत नहीं हुई, उनकी छत की लकड़ियों को वही लोग ले जाकर ताप लिया करते हैं और अब उनकी दीवारें और छतें जीर्ण–शीर्ण अवस्था में गिरने के लिए तैयार हैं, पुरोहितों और मुल्लाओं का पेशा उठा दिया गया है, अपने हाथ से काम करो तो ठीक, नहीं तो महारानी फूलकुमारी की अब वे पचासों लौण्डियाँ नहीं रह गयीं, उन्हें अपने हाथ नहाना और धोना नहीं पड़ता, बल्कि पापी पेट के लिए खेत काटना, मिट्टी ढोना और सब तरह का काम करना पड़ता है। जिनके हाथ कभी मक्खन की तरह मुलायम थे, अब उनके हाथों में पत्थर के–से कड़े पाँच–पाँच घट्ठे देख सकते हैं। साधु–महात्मा का नाम वहाँ नहीं, सबसे बड़ी बात तो यह है कि जात–पाँत का कोई खयाल नहीं रखा जाता। देखिये पापी पेट के लिए, इस चार दिन की जिन्दगी के लिए इस तरह का अधर्म क्या आप लोग पसन्द करेंगे? मैंने समझा था कि मेरे भाषण के पिछले मजमून को सुनकर लोग भड़क उठेंगे।

लेकिन वहाँ उन लोगों को कहते सुना कि अरे, इसमें क्या रखा है, आदमी की तरह सुखपूर्वक जीवेंगे और चिन्ता के बोझ से दिल तो हल्का होगा। कुछ तो कहने लगे – बाबा! यह हमारे यहाँ कब होगा? हमारी जिन्दगी में हो जायेगा कि नहीं?

साम्यवादियों को जनता के सामने निधड़क होकर अपने विचार को रखना चाहिए और उसी के अनुसार करना भी चाहिए। हो सकता है, कुछ समय तक लोग आपके भाव न समझ सकें और गलतफहमी हो, लेकिन अन्त में आपका असली उद्देश्य हिन्दू–मुसलमान सभी गरीबों को आपके साथ सम्बद्ध कर देगा। रूढ़ियों को लोग इसलिए मानते हैं, क्योंकि उनके सामने रूढ़ियों को तोड़ने वालों का उदाहरण पर्याप्त मात्रा में नहीं है। लोगों में इस खयाल का जोर से प्रचार करना चाहिए कि मजहब और खुदा गरीबों के सबसे बड़े दुश्मन हैं। वे मरने के बाद स्वर्ग का लालच देकर इस जीवन को नरक बनाते हैं। ऋतु–सम्बन्धी तथा अन्य राष्ट्रीय महत्त्व के उत्सवों में साम्यवादियों को भी शामिल होना चाहिए, लोगों को भी उसकी ओर आकर्षित करना चाहिए, लेकिन जिन त्योहारों का सम्बन्ध मजहब से है, उनसे

अपने को अलग रखना चाहिए।

हमें जन्माष्टमी और मौलूद शरीफ, नवरात्रि और ईद से कोई सम्पर्क नहीं रखना चाहिए, ताजिया और रामलीला दोनों हमारे लिए एक समान त्याज्य है। हिन्दुओं की गोरक्षा सबसे बड़ी बेवकूफी और हानिकारक चीज है। खुद तो इनके पुरखे अभी सोलह सौ वर्ष पहले तक गाय का मांस घर-घर में खाते और खिलाते रहे हैं, वहीं धूर्त पुरोहित, जिनके पूर्वजों के यहाँ बिना एक छह महीने की बछिया मारे मेहमान की खातिरदारी नहीं हो सकती थी, वही अब गाय के पीछे जेहाद बोल रहे हैं। इस बारे में हमारी राय खुली और स्पष्ट होनी चाहिए। हमारे लिए गाय वैसी चीज है, जैसी कि और भी कोई जानवर। हिन्दू किसान मजदूरों को समझना चाहिए कि तुम्हारे पूर्वजों की करनी गोरक्षा के विषय में कैसी थी? कुर्बानी करना भी बेवकूफी है और फिर उस खुदा के लिए जो गरीबों का सबसे बड़ा दुश्मन है। हिन्दू जब खुद अपने खयाली देवताओं के लिए बकरी-सुअर चढ़ाये, तब तो कोई बात नहीं, लेकिन जब मुसलमान उसी बेवकूफी को करे तो उसके लिए लट्ठ लेने को तैयार हो जायें तो यह कितनी वाहियात बात है।

गोकशी और रामलीला, ताजिया और बाजा – ये सारे झगड़े धनियों के बड़े काम के हैं। वह उन्हीं को लेकर गरीबों में झगड़े पैदा करते हैं। उनको एक-दूसरे का जानी दुश्मन बनाते हैं और फिर अपना उल्लू सीधा करते हैं। मजहब और खुदा के खिलाफ हमें जबरदस्त प्रचार करना चाहिए।

किसानों और मजदूरों को अपनी जिन्दगी की नित्य-नित्य की कड़वाहट का इतना अनुभव होता है कि समझाने पर वे मजहब की धोखाधड़ी को समझ सकते हैं। एक मर्तबे यदि यह भाव हमने लोगों में पैदा कर दिया, तो किसान और श्रमिक जनता की सारी सम्मिलित शक्ति क्रान्ति के लिए तैयार हो जायेगी।

उर्दू-हिन्दी, धोती-पायजामा, लाल-सफेद टोपी भी उसी मजहब ने पैदा किया है। साम्यवादियों के लिए कोई बात इसलिए माननीय नहीं है कि वह हजारों वर्ष से चली आती है। हम जानते हैं कि जितनी शताब्दियाँ हम पीछे की ओर जायेंगे, उतना ही लोगों में बेवकूफी का परिमाण भी अधिक पायेंगे। हर एक चीज पर हमें बुद्धिपूर्वक विचार करना है। न किसी पोथी की बात माननी है; न किसी बड़े आदमी की। तब हमें अपने आप ही अपना रास्ता साफ दिखलायी पड़ने लगेगा।

हमें उस समय के लिए उतावला होना चाहिए, जब कि हमारे देश से जातिभाव सपना हो जायेगा, छुआछूत मिट जायेगी और धर्म एवं वेद अतीत की बात हो जायेंगे। रोटी-बेटी, वेश-भूषा, भाषा-भाव सब एक हो जायेंगे।

* * *

4

शिक्षा में आमूल परिवर्तन

शिक्षा की कोई भी प्रणाली इस प्रकार की होनी चाहिए कि वह किसी राष्ट्र की मानसिक आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्त्ति कर सके। भारतवर्ष में हम लोग अपनी शिक्षा–प्रणाली के दोषों से पूर्णतया परिचित हैं। यह शिक्षा–प्रणाली हमारी आवश्यकताओं की पूर्त्ति नहीं करती, वरन यह एक बड़ा भारी नुकसान कर रही है। हमारे शिक्षितों को यह व्यक्तिगत और सामाजिक उत्तरदायित्व के भार को वहन करने में सर्वथा असमर्थ कर देती है। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं कि हमारे स्कूलों और विश्वविद्यालयों की शिक्षा एकदम व्यर्थ है। विज्ञान, इतिहास और साहित्य जो कि हमारे शिक्षालयों में पढ़ाये जाते हैं, वे सब किसी भी सभ्य राष्ट्र के लिए आवश्यक हैं।

लेकिन हमारी शिक्षा में एक बहुत बड़ा दोष यह है कि यह शिक्षितों को शारीरिक श्रम करने के बिल्कुल अयोग्य बना देती है। शिक्षित पुरुष शारीरिक श्रम को अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझता है। अपने समाज में हम आलसियों की पूजा करते हैं, अर्थात हम ऐसे शिक्षित पुरुष चाहते हैं जो सब प्रकार के शारीरिक श्रम को घृणा की दृष्टि से देखता है और अपने छोटे–मोटे व्यक्तिगत कामों के लिए भी नौकर पर निर्भर करता है।

यह आदत हमारे शासकों ने इस देश में प्रतिष्ठित होने के लिए कायम की थी। हमारे काले और गोरे नवाबों के उदाहरण शिक्षित भारतीयों के लिए आदर्श बन गये और हमारी वर्त्तमान अवस्था का उत्तरदायित्व इसी पर है।

शारीरिक श्रम – इस सम्बन्ध में हमें पहला शिक्षा–सम्बन्धी सुधार यह करना है कि लोगों के मस्तिष्क पर शारीरिक श्रम के महत्त्व की छाप डाल दें। शारीरिक श्रम को अनिवार्य विषयों के समान हमें अपने पाठ्यक्रम का एक अंग बनाना पड़ेगा। किसी भी विद्यार्थी को प्रारम्भिक वर्ग से लेकर विश्वविद्यालय तक तरक्की नहीं मिलनी चाहिए, जब तक वह शारीरिक श्रम के विषय में उत्तीर्ण न हो ले।

प्रत्येक आदमी शिक्षा के महत्त्व को समझता है, अतएव अगर लोग इसके लाभ से शारीरिक श्रम न करने के कारण वंचित कर दिये जायें तो वे शारीरिक श्रम करने के लिए बाध्य होंगे। इस शारीरिक श्रम से किसी को छुटकारा नहीं मिलना चाहिए, यदि उसके अवयवों में कोई दोष न हो। शारीरिक श्रम जमीन खोदने और बोझा ढोने के रूप में रहना चाहिए। विद्यार्थियों की उम्र के मुताबिक हरेक वर्ग को हरेक सप्ताह में किन्हीं नियत घण्टों तक शारीरिक श्रम करना चाहिए।

शिक्षा-विभाग के अधिकारियों को इसका सन्तोष होना चाहिए कि जो विद्यार्थी उत्तीर्ण होते हैं, वे सच्चाई से अपना नियत शारीरिक श्रम करते हैं और कर सकते हैं। शिक्षक और छात्र परीक्षकों को धोखा नहीं दे सकते, क्योंकि प्रतिदिन अभ्यास डाले बिना आधे घण्टे तक जमीन खोदना कठिन है। हम लोगों के बहुत से बैठे-ठाढ़े शिक्षित पुरुष कृषि का कार्य अथवा ऐसा ही अन्यान्य कार्य जिसमें शारीरिक श्रम की आवश्यकता है, नहीं कर सकते, क्योंकि अपने सम्पूर्ण छात्र-जीवन में वे कठिन शारीरिक श्रम से बिलकुल दूर रहते हैं। साप्ताहिक शारीरिक श्रम के अलावे माध्यमिक स्कूलों और कालेजों में हर साल एक महीने का परिश्रमपूर्ण कैम्प-जीवन हो।

इस प्रकार के कैम्प-जीवन से छात्रों को बहुत-सी शिक्षाएँ मिल सकती हैं। हिटलर के अभ्युदय के साथ ही जर्मनों ने छात्रों के लिए ऐसी प्रणालियाँ बनायी हैं और इस प्रकार के कैम्प उन्होंने मजदूरों के लिए भी बना रखे हैं। इस प्रकार के खीमों में छात्र और मजदूर एक ही प्रकार के जीवन बिता सकेंगे और एक-दूसरे के भावों को समझेंगे। निस्सन्देह यह सब खर्च सरकार ही वहन करती है और वह इस श्रम को सड़क बनाने अथवा दूसरे प्रकार के सर्वसाधारण के उपयोगी कामों में लगाती है। इस देश में सभी वही बातें की जा सकती हैं। हम लोगों के पास सड़कें अच्छी नहीं और हमें नहरों और बाँधों की आवश्यकता है। अगर हम लोग जर्मन-प्रणाली का अनुसरण करें तो हम लोग बहुत आसानी से कैम्प-जीवन के खर्च का प्रबन्ध कर सकेंगे और इस शारीरिक श्रम का बहुत से कामों में उपयोग कर सकेंगे।

कृषि-शिक्षा - हम लोग इस बात को जानते हैं कि खेती की अवस्था इस देश में बिल्कुल प्रारम्भिक है। हम लोगों के पास कुछ कृषि-कालेज हैं जिनमें कृषि-विद्या का अध्ययन होता है। लेकिन अभी तक हमने अपनी कृषि में कोई वैज्ञानिक सुधार नहीं किया। हम इसके लिए कृषकों की रूढ़ियों को दोष देते हैं। बेशक कृषक रूढ़ि-प्रेमी हैं, किन्तु ऐसे रूढ़ि-प्रेमी कृषक हर देश में पाये जाते हैं। किन्तु साधारण समझ का किसान भी अपने आर्थिक लाभ को अवश्य समझ

सकता है। हमें उत्तर बिहार की ईख की खेती का अनुभव है और यह अनुभव चीनी के कारखानों के स्थापित होने के समय से विशेष रूप में मिला है।

4–5 वर्षों के बीच किसानों ने पुरानी फसलों को छोड़कर ईख बोना शुरू कर दिया। हमारा पूसा कालेज नयी जाँचों में सहायक हो सकता है। लेकिन कृषि–कालेजों में कृषि–कर्म करने में जो खर्च पड़ता है, वह इतना अधिक है कि उसे हम व्यवहार में नहीं ला सकते हैं। सच बात तो यह है कि यूरोप और अमेरिका में जो प्रणालियाँ प्रचलित हैं, उनको हम अपने देश में व्यवहार में नहीं ला सकते, क्योंकि हमारे किसानों के पास न तो उतनी जमीन है और न उतना मूलधन है। अतएव हमें आधुनिक कृषि–शिक्षा कृषि–स्कूल से प्राप्त करना बहुत उचित होगा। कृषि–कालेज में प्रवेश पाने के लिए हमारे यहाँ विद्यार्थियों को कम से कम इण्ट्रेंस पास होना चाहिए। इसका नतीजा यह होता है कि जो कोई कृषि–कालेज से भी शिक्षा प्राप्त करता है, नौकरी ही के पीछे परेशान रहता है।

ऐसा कोई प्रबन्ध नहीं है कि थोड़े ही दिनों में किसानों को कुछ उपयोगी बातें बता दी जायें और इन सीखने वालों को जहाँ तक हो सके, कम ही शिक्षा प्राप्त कर प्रवेश पाने की कैद रखी जाये और प्राइमरी शिक्षा का प्रबन्ध इस प्रकार किया जाये कि छह वर्ष का पाठ्यक्रम समाप्त करके छात्र कृषि–स्कूल में भर्ती हो सकें।

इस प्रणाली में नवीनता लाते हुए हमको खर्च पर भी ध्यान देना चाहिए। अगर इसका खर्च बहुत ज्यादा होगा तो इससे कृषक आकर्षित कदापि न होंगे। मैं कृषि–सम्बन्धी सिद्धान्तों की शिक्षा की निन्दा नहीं करता।

लेकिन व्यावहारिक शिक्षा की आवश्यकता बहुत बड़ी है। इस अभिप्राय से हम लोगों को हरेक जिले में एक कृषि–स्कूल चाहिए जिसमें चार वर्ष का पाठ्यक्रम रहे और नियमित छात्रों के अतिरिक्त थोड़े समय के लिए विशेष विषयों का पाठ्यक्रम सर्वसाधारण कृषकों के लिए भी रहे। नवीन प्रणालियों का अन्वेषण इस शिक्षा का प्रधान भाग होना चाहिए। यह शिक्षा तब तक उपयोगी न होगी जब तक सस्ती कृषि न हो। कलें, खाद और चुने हुए बीज हमें आसानी से न मिल सकें। सस्ती कलें तैयार करने के लिए कुछ देशी कारखाने संस्थापित होने चाहिए।

उद्योग–धन्धों की शिक्षा – पहले तो समूचा देश ही कल–कारखानों में बहुत पिछड़ा हुआ है। किन्तु बिहार तो और भी पिछड़ा हुआ है। इस प्रान्त की पहली सरकार तो इस बात पर जरा भी ध्यान नहीं देती थी और साधारणतः जनता भी इससे उदासीन ही है। धनबाद में माइनिंग–स्कूल है। लेकिन यदि विद्यार्थियों की सूची देखी जाये तो यह पता चल जायेगा कि करीब–करीब सभी अबिहारी ही हैं। भारत ऐसे घनी आबादी के देश की मुक्ति उसके कल–कारखानों की उन्नति पर निर्भर करती है। हरेक कमिश्नरी में एक औद्योगिक स्कूल चार वर्ष के पाठ्यक्रम

का अवश्य रहना चाहिए। ऐसे स्कूलों में भर्ती होने के लिए विद्यार्थियों को मिडिल पास होना चाहिए। इनमें विषयों की शिक्षा स्थानीय आवश्यकता के अनुकूल होनी चाहिए। उनमें चीनी मिट्टी के पात्र, चमड़े का काम, शीशे का काम, धातु के पात्र, मिट्टी के पात्र, कागज बनाना, सिलाई का काम, बढ़ई का काम, रेशम का काम, व्यावहारिक इंजीनियरिंग और औद्योगिक रसायनशास्त्र तथा ऐसे ही दूसरे-दूसरे उपयोगी विषयों की शिक्षा होनी चाहिए।

प्रारम्भिक और माध्यमिक शिक्षा - बिना विलम्ब के निःशुल्क और अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा लड़के और लड़कियों के लिए शुरू कर देनी चाहिए। आवश्यक रुपये के लिए हम लोगों को चन्दा माँगना या उधार लेना चाहिए, क्योंकि प्रारम्भिक शिक्षा नागरिकता का आवश्यक गुण है। इसके बिना सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उन्नति के सब प्रयत्न बेकार होंगे। लड़के और लड़कियों के लिए पृथक स्कूल का निर्माण खर्च को दूना कर देगा।

छह से बारह वर्ष तक सहशिक्षा में किसी को उज्र नहीं होगा। भाषा, व्याकरण और हिसाब तथा दूसरे विषयों की शिक्षा के साथ हम लोगों को शारीरिक श्रम की शिक्षा भी अवश्य प्रारम्भ कर देनी चाहिए। इनमें धार्मिक शिक्षा की कोई जरूरत नहीं, किन्तु नैतिक और राष्ट्रीय शिक्षाएँ उन्हें ऐसी मिलनी चाहिए जो उन्हें राष्ट्रीयता सिखा सकें।

यू.पी. और पंजाब में हाई-स्कूलों का पाठ्यक्रम प्राइमरी को मिलाकर 10 वर्ष का है। बिहार में 11 वर्ष की शिक्षा की कोई आवश्यकता नहीं। वर्नाकुलर और अंग्रेजी स्कूल के भेद रखने की कोई आवश्यकता नहीं। अंग्रेजी अनिवार्य दूसरी भाषा रहे, परन्तु दूसरे विषयों की शिक्षा मातृ-भाषा के माध्यम से हो। प्राचीन भाषाओं की पढ़ाई पर विशेष जोर न दिया जाये, किन्तु विद्यार्थियों को गणित और विज्ञान के अतिरिक्त विषय के रूप में लेने के लिए उत्साहित किया जाये।

विश्वविद्यालय की शिक्षा - हमारी यह शिक्षा अधिक-से-अधिक उपयोगी विज्ञान के ज्ञान में वृद्धि करे, हमें सैद्धान्तिक अध्ययन विज्ञान का करना चाहिए। लेकिन व्यावहारिक विज्ञान का ज्ञान हम विशेष रूप से प्राप्त करें। विज्ञान की शिक्षा के लिए किसी राष्ट्र को हर विद्यार्थी पर कुछ रुपया खर्च करना पड़ता है। अतएव विज्ञान के स्नातकों को वकालत में प्रवेश करके इस रुपये का अपव्यय न करना चाहिए। प्रोफेसर की नियुक्ति स्पर्धामय परीक्षाओं (Competitive Examinations) से होनी चाहिए। शिक्षा-सम्बन्धी संस्थाओं में जाति या वर्ग का भाव लाना बहुत हानिकारक होगा। आनर्स और पोस्ट ग्रेजुएट क्लासों की शिक्षा उन्हीं प्रोफेसरों से दिलानी चाहिए जो अपने विषयों में कुछ मौलिक अन्वेषण कर रहे हों। यदि कोई अध्यापक कोई मौलिक लेख किसी प्रमाणित पत्र में नहीं

प्रकाशित कराता हो तो उसे उन क्लासों के पढ़ाने का अधिकार न होना चाहिए। प्राचीन भाषाओं की शिक्षा के लिए अंग्रेजी जानने की आवश्यकता पर जोर न देना चाहिए। पुराने ढंग का पण्डित या मौलवी अपने विषय को किसी एम.ए. से अधिक योग्यतापूर्वक पढ़ा सकता है और अंग्रेजी के माध्यम द्वारा संस्कृत पढ़ाने का कोई अर्थ नहीं। मैं इस बात को समझता हूँ कि पुराने ढंग से पण्डित या मौलवी ऐतिहासिक और वैज्ञानिक पहलू में अपने विषयों से परिचित नहीं होते हैं। किन्तु आनर्स और पोस्ट–ग्रेजुएट के प्रोफेसरों को रिसर्च स्कालर होना चाहिए। सभी भारतीय विश्वविद्यालयों के चांसलर वाइसराय या गवर्नर होते हैं। प्राचीन काल में ऐसे प्रबन्ध में कोई उद्देश्य रहा होगा। किन्तु अब, जबकि शिक्षा निर्वाचित मन्त्रियों के हाथ में रख दी गयी है, तो पुरानी परिपाटी का परिचालन करना आवश्यक नहीं है। हम लोगों को एक वैतनिक चांसलर रखना चाहिए जिसमें इतने गुण हों और इतना सभ्य हो कि वह विश्वविद्यालय की शिक्षा को अच्छी तरह से सँभाल सके। बिहार के विश्वविद्यालय का प्रबन्ध सभी विश्वविद्यालयों के प्रबन्ध से खराब है। कोई भी पुरुष जो अफसरों की नजर में वाइस–चांसलर होने के योग्य हो, वह इसका वाइस–चांसलर बना दिया जाता है। दरअसल वाइस–चांसलर का पद भी, एक प्रकार की राजभक्तिसूचक प्रतिष्ठा है जिसे सरकार अपने भक्तों के ऊपर सम्राट की दी हुई पदवियों के समान दे दिया करती है। यह इतना आसान काम समझा जाता है कि कुछ मिनटों में ही वाइस–चांसलर अपना राग अलाप जाते हैं, क्योंकि अवैतनिक वाइस–चांसलर को अपने पेशे से तो फुर्सत मिलती ही नहीं। हम लोग आसानी से अपने पड़ोसी प्रान्त यू.पी. के विश्वविद्यालयों से इस सम्बन्ध में बहुत कुछ सीख सकते हैं।

पिछड़ी जातियों की शिक्षा – निःशुल्क और अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा होने पर भी ऊँची शिक्षा तो खर्चीली रहेगी ही। पिछड़े हुए वर्ग इसका खर्च नहीं जुटा सकते, क्योंकि उनकी आर्थिक अवस्था बहुत गिरी हुई है। शिक्षा में उनकी कोई उन्नति नहीं हो सकती जब तक कि सरकार उनके होनहार विद्यार्थियों को सहायता न दे। मैं जानता हूँ कि सरकार के पास इतने रुपये न रह जायेंगे कि पिछड़ी जातियों के बच्चों के लिए एक उच्च शिक्षा का प्रबन्ध कर सके। पर हमें उनके लिए अवश्य कुछ करना है। वे सदैव सामाजिक अन्याय से ही न दबे रह जायें, हमें यह अवश्य देखना है। पिछड़ी हुई जातियों के वे सब छात्र जो प्रारम्भिक या माध्यमिक परीक्षाओं में प्रथम श्रेणी में पास हों, उच्च शिक्षा के लिए सरकारी वृत्तियों के अधिकारी समझे जायें।

स्वीकृत पुस्तकें – जो पुस्तक किसी भी कक्षा के लिए स्वीकृत की जाती हैं, उनका प्रकाशन व्यक्तिगत प्रकाशकों द्वारा बहुत ही निन्दनीय है। यह एक प्रकट

रहस्य है कि किस प्रकार घूसखोरी इस पुस्तक-चुनाव के सम्बन्ध में की जाती है। हरेक व्यक्तिगत प्रकाशक के ऊपर बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। अतएव यदि किसी शिक्षा-सम्बन्धी संस्था में किसी प्रकार की अपवित्रता पायी जाये तो उसके लिए कठिन दण्ड देने में आनाकानी न करनी चाहिए। शिक्षा-विभाग लेखकों का एक समूह रख सकता है और योग्य लेखकों को उचित पारिश्रमिक भी दे सकता है। जितनी किताबें प्राइमरी और उच्च स्कूलों के लिए स्वीकृत हों, उन्हें शिक्षा-विभाग ही प्रकाशित करे। विश्वविद्यालय अपने पाठ्यक्रम के सभी विषयों की पुस्तकें प्रकाशित करे। हाँ, केवल उन विषयों की पुस्तक जो किन्हीं खास विषयों पर लिखी गयी हैं और जिनके लेखक विश्वविद्यालय की अधीनता में नहीं हैं, बाहर से मँगायी जा सकती हैं।

नीचे मैं उन सुधारों का सारांश लिख देता हूँ जिन्हें भिन्न-भिन्न शिक्षा-विद्यालयों में प्रचलित करने की नितान्त आवश्यकता है।

प्रारम्भिक शिक्षा - (1) छह वर्ष का पाठ्य-क्रम (सात से बारह वर्ष की अवस्था तक), (2) निःशुल्क और अनिवार्य, (3) लड़कियों और लड़कों की सह-शिक्षा, (4) अनिवार्य शारीरिक श्रम (खोदना और ढोना), (क) प्रथम से चतुर्थ वर्ग तक प्रति सप्ताह तीन घण्टे, (ख) पाँचवें और छठे वर्ग के लिए चार घण्टे प्रति सप्ताह, (5) पाँचवें और छठे वर्ग के लिए कुछ खेती और घरेलू विज्ञान के पाठ, (6) फौजी कवायद प्रति सप्ताह दो घण्टे, (7) राष्ट्रीय और नैतिक शिक्षा (धार्मिक शिक्षा के बदले में)।

माध्यमिक शिक्षा - (अ) **हाई-स्कूल** - (1) चार वर्ष के पाठ्य-क्रम (तेरह से सोलह वर्ष), (2) अनिवार्य शारीरिक श्रम (खोदना और ढोना) छह घण्टे प्रति सप्ताह - मातृ-भाषा माध्यम के रूप में और अंग्रेजी दूसरी अनिवार्य भाषा के रूप में, (3) प्राचीन भाषा में वैकल्पिक विषयों में एक, (4) अतिरिक्त गणित और विज्ञान की शिक्षा का विशेष प्रबन्ध, (5) फौजी कवायद प्रति सप्ताह दो घण्टे, (6) कैम्प-जीवन का श्रम (निःशुल्क हर साल एक मास), (7) प्रथम श्रेणी में पास करने वाले पिछड़े वर्ग के छात्रों को छात्रवृत्ति।

(आ) **कृषि स्कूल** - (1) हर जिले में एक, (2) प्राइमरी वर्ग परीक्षोत्तीर्ण छात्रों का प्रवेश, (3) नियमित विद्यार्थियों का 4 वर्ष का कोर्स - विशेष शिक्षा के लिए छह महीने, (4) खेती की व्यावहारिक शिक्षा, (5) बागवानी, रेशम के काम, मक्खन निकालने का काम, मुर्गी पालने का काम, (6) कैम्प-जीवन श्रम (निःशुल्क) प्रतिवर्ष एक मास, (7) माध्यम मातृभाषा, अंग्रेजी अनिवार्य दूसरी भाषा, (8) फौजी कवायद प्रति सप्ताह दो घण्टे, (9) (अ) के मुताबिक छात्रवृत्तियाँ।

(इ) **व्यावहारिक** – (1) प्रत्येक कमिश्नरी में एक स्कूल, (2) चार वर्ष का कोर्स, (3) रेशम, सिलाई, बढ़ईगीरी, चीनी मिट्टी के पात्र, चर्मकार्य, काँच और द्रव्य का काम, कागज बनाना, कल–काँटे का काम और व्यावहारिक रसायन शास्त्रादि विषय।

(ई) **गाँवों का ढाँचा बनाना इत्यादि** – (1) प्रवेश आठवें वर्ग पास, (2) अनिवार्य शारीरिक श्रम (खोदना और ढोना) प्रति सप्ताह छह घण्टे, (3) कैम्प–जीवन श्रम (निःशुल्क) प्रति वर्ष एक मास, (4) फौजी कवायद हफ्ते में दो घण्टे, (5) मातृ–भाषा माध्यम और अंग्रेजी दूसरी अनिवार्य भाषा, (6) (अ) के समान छात्रवृत्तियाँ।

विश्वविद्यालय की शिक्षा – (1) भविष्य में उपयोगिता के अनुसार विषयों का सामूहिक विभाग, (2) अनिवार्य शारीरिक श्रम (खोदना और ढोना) हफ्ते में छह घण्टे, (3) कैम्प–जीवन श्रम (निःशुल्क) प्रतिवर्ष एक मास, (4) राइफल चलाना और दूसरी फौजी कवायद दो घण्टे प्रति सप्ताह, (5) औद्योगिक और सामाजिक विज्ञानों के पढ़ने के लिए विशेष प्रबन्ध, (6) राजनीतिक विचार और उनके अभिव्यंजन की स्वतन्त्रता, (7) माध्यम मातृभाषा, अंग्रेजी दूसरी अनिवार्य भाषा, (8) विज्ञान के स्नातक कानून न पढ़ें और दूसरे पेशे भी न करें जिनसे उनका ज्ञान व्यर्थ जाये, (9) वैतनिक चांसलर आवश्यक गुणों के साथ, (10) प्राचीन भाषाओं के प्रथम चार वर्गों में अध्ययन के लिए शिक्षकों को अंग्रेजी ज्ञान की जरूरत नहीं, (11) जो प्रोफेसर आनर्स और पोस्ट–ग्रेजुएट क्लासों में पढ़ाते हैं, उनको अन्वेषण–सम्बन्धी लेख लिखना जरूरी है, (12) प्रोफेसरों की नियुक्ति स्पर्धा–परीक्षाओं के द्वारा हो, (13) उन पिछड़ी हुई जातियों को वृत्तियाँ दी जायें जो मैट्रिकुलेशन परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हों।

* * *

5

नव-निर्माण

साम्यवादी समाज का आर्थिक निर्माण नयी तरह से करना चाहते हैं और वह निर्माण रफू या लीपा-पोती करके नहीं करना होगा। एक तरह से उसे नयी नींव पर दीवार खड़ी करके करना होगा। भारत की साधारण जनता की गरीबी इतनी बढ़ी हुई है कि उसके लिए अनन्त की ओर इशारा नहीं किया जा सकता। हमें अपने काम में तुरन्त जुट जाना चाहिए। पिछले चुनाव में जनता के सामने जो कार्यक्रम रखा गया है, यद्यपि उसमें नव-निर्माण उतना आगे तक नहीं है; जितना कि साम्यवादी चाहते हैं, लेकिन देखने में आ रहा है कि हमारे नेता लोग उस हल्के भाग को भी बहाना करके टाल देना चाहते हैं। जिसके वोट पर कांग्रेस के लोग चुनाव-युद्ध में विजयी हुए और गवर्नमेण्ट की बागडोर उनके हाथ में आयी, अब वे कह रहे हैं कि वे उन किसानों के ही प्रतिनिधि थोड़े हैं, उन्हें जमींदारों का भी खयाल होगा। शायद उनको यह पता नहीं है कि जिन किसानों ने उन्हें यह विजय और अधिकार दिया, चार वर्ष बाद फिर उन्हें उन्हीं के सामने जाना है। उन्हें शायद यह खयाल होगा कि कांग्रेस का संगठन उनके हाथ में है। किसानों को तो क्रान्ति की कुछ गरम-गरम बातें अपनी वर्त्तमान कठिनाइयों और कुछ भविष्य के प्रलोभन देकर भुलवाया जा सकता है और किसान कार्यकर्त्ताओं को हम कांग्रेस के भीतर कुछ गड़बड़ करने का मौका ही नहीं देंगे। कुछ चीं-चपड़ करेंगे तो उन्हें 'डिसिप्लिन' का डर दिखायेंगे। एसेम्बली और कौंसिल के किसान-पक्षी मेम्बरों को साम, दाम देकर एक साथ मिलने नहीं देंगे, प्रस्ताव की अधिकता और भाषाओं की भरमार का डर दिखलाकर हरेक काम को कार्यकारिणी और फिर मन्त्रियों के हाथ में सौंपकर सब काम अपने हाथ में ले लेंगे।

इस तरह चार वर्ष बाद फिर हम उसी शान से किसानों के सामने जायेंगे, जैसे कि पिछले चुनाव में गये थे। लेकिन उनको खयाल रखना चाहिए कि किसानों की कठिनाइयाँ काल्पनिक नहीं हैं।

जीवन की अत्यन्त उपयोगी सामग्रियों से हिन्दुस्तान के किसान कितने वंचित

हैं, इनकी दुनिया में मिसाल नहीं। लड़कों की शिक्षा, शादी–ब्याह, कर्ज, भेंट, बेगार, पचासों ऐसी चिन्ताएँ हैं जो किसानों के दिल में भूसे के भीतर आग की तरह सुलगती रहती हैं। चिकनी–चुपड़ी बातों से आप किसानों को भुलावा नहीं दे सकते और किसान कार्यकर्त्ता भी न ऐसे भोले–भाले हैं, न ऐसे स्वार्थ और मान के पीछे मरने वाले हैं कि आपके चकमों में आ जायेंगे। आपको किसानों के प्रोग्राम में शायद दिल से भी हिचकिचाहट है। हम यह तो नहीं कहते कि मन्त्री लोग, जिनमें अधिकांश जमींदार हैं, अपने स्वार्थ के लिए टालमटोल करना चाहते हैं। लेकिन शायद आप लोगों को जमींदारों के संगठन का भय हो। शायद आप अपर कौंसिल के वोट से डरते हों, जहाँ पर कि जमींदारों के बहुमत का डर है और इसीलिए आप समझौता करना चाहते हैं। कुछ ऐसी बातें हैं जिन पर समझौता करके किसानों को आप अपना कट्टर दुश्मन बना लेंगे। भावली, दानाबन्दी, सर्टिफिकेट और सलामी में तो समझौता हो ही नहीं सकता। उन्हें तो कलम की एक नोक से काट देना होगा। अगर कौंसिल से नहीं पास होता तो और दूसरे रास्ते हैं, उन्हें आप अख्तियार करें। खेती की आमदनी के लिए जमींदारों पर जो टैक्स बैठाना चाहते हैं, उसमें भी आपको नरमी से काम नहीं लेना होगा।

5 हजार आमदनी वाले जमींदारों को आप इस टैक्स से बरी कर सकते हैं, क्योंकि जिसे 5 हजार की आमदनी है और घर में आठ–दस व्यक्ति हैं, उसके लिए व्यक्ति पीछे हजार–आठ सौ रुपये साल की आमदनी पड़ जाती है। हाँ, उसे भी इसके लिए तो जरूर तैयार करना होगा कि लगान की शरह जहाँ अधिक हो, वहाँ कम की जाये। हरेक खेत का दर्जा सर्वे में बँधा हुआ है। उस दर्जे के मुताबिक आप महत्तम और लघुत्तम शरह बाँध दें और उसके अनुसार सभी छोटे–बड़े जमींदारों को चलने के लिए मजबूर करें। लेकिन 5 हजार से जिनकी आमदनी ज्यादा है, उन पर इनकम टैक्स लगाना चाहिए। और एक लाख से 5 लाख वालों तक को 30 सैकड़ा से कम नहीं होना चाहिए। पाँच से दस लाख तक 4 सैकड़ा, 10 से 20 लाख तक पचास सैकड़ा और 20 लाख से ऊपर वालों से कम हर्गिज टैक्स नहीं लेना चाहिए। हमारे मन्त्री लोग इस इनकम टैक्स से 3–4 लाख की आशा रख रहे हैं। डेढ़ करोड़ की आमदनी तो सिर्फ बिहार के चार–पाँच जमींदारों को ही हो जाती है। 80 लाख तो आप उन्हीं से ले सकते हैं। आपका दिल अगर कमजोर है, हाथ काँपता है, तो उसे स्पष्ट क्यों नहीं कहते? अपर चैम्बर से डरने का बहाना क्यों करते हैं जब कि आपने गवर्नर से इन्हीं सब बातों के लिए आरम्भ में ही झगड़ा कर लिया था। आपको न जमींदारों की परवाह करनी होगी और न गवर्नर के नाराज होने की। आप अपने प्रस्ताव और बिल को निधड़क होकर रखें। अगर कौंसिल उसे इनकार करती है तो गवर्नर कौंसिल और असेम्बली दोनों की

सम्मिलित बैठक करने को मजबूर करें। यदि यह नहीं होता है, तो नया चुनाव करवायें और उस चुनाव में इनकम टैक्स ही नहीं, जमींदारी प्रथा को उठाना अपना प्रोग्राम रखें। फिर कौंसिल में आयें और फिर उसी उत्साह के साथ अपने प्रोग्राम को रखें। जमींदारों और किसानों का स्वार्थ इतना एक-दूसरे के विरुद्ध है कि उसे आप एकान्त कोठरी में जमींदारों से घुल-मिलकर बात करके या अमुक 'सर' और अमुक 'नारायण सिंह' की चाय पार्टी में तय नहीं कर सकते। वह समय दूर नहीं है जब कि किसान, जो आपके वास्तविक मालिक हैं, आप को हुक्म देंगे कि आप किसी बड़े जमींदार और राजा-महाराज से मिलने-जुलने और चाय-पान करने से वैसे ही अलग रहें, जैसे पहले कांग्रेस के हुक्म से सरकारी हाकिम उनकी चाय-पार्टियों से अलग रखे गये। यह कितनी शर्म की बात है कि वोट तो लें आप किसानों से, अधिकार तो मिले आपको किसानों के बल पर और कहें कि हम अब तो गवर्नमेण्ट हैं, किसी एक पार्टी के थोड़े हैं। इसी बात को, अगर हिम्मत है तो लोगों के सामने आप खुली तौर से कहें और तब किसान बतला दें कि अगर आप मध्यस्थ हैं, तो किसानों के वैसे ही दुश्मन हैं, जैसे पुरानी सरकार।

कांग्रेस मन्त्रिमण्डल, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और कौंसिल में शायद बालिग को वोट का अधिकार देना नहीं चाहता। म्युनिसिपैल्टियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में वह सरकार की तरफ से जाने वाले आदमियों को भी जारी रखना चाहता है। पहली बात में तो बहाना किया जाता है कि वोटरों की संख्या बहुत अधिक हो जायेगी, खर्च बहुत बढ़ जायेगा और प्रबन्ध करना बहुत मुश्किल हो जायेगा। कांग्रेस के मन्त्रियों को यह कहते हुए शर्म आनी चाहिए। आज कितने वर्षों से यही लोग इसके लिए अंग्रेजी सरकार से लड़ रहे थे। अभी-अभी उन्होंने भारत के स्वदेशी विधान के लिए बालिग वोटरों द्वारा चुनी प्रतिनिधि सभा (कान्स्टीट्यूएण्ट असेम्बली) बुलाने का प्रस्ताव पास किया। दूसरों के माथे डालना हो तो बालिग वोटरों का सिद्धान्त ठीक और जब अपने लिए आये तो उसे बेठीक कह दिया जाता है। यह अजब सिद्धान्त है। मनोनीत सभासद जब पहले सरकार भेजती थी, तो उसको हजार गालियाँ दी जाती थीं। अब इस डर से कि डिस्ट्रिक्ट बोर्डों और म्युनिसिपैल्टियों में नरमदली कांग्रेसियों के विरोधी साम्यवादी और किसानों का बहुमत न हो जाये, इसलिए मनोनीत सभासदों को अपने हाथ रखना चाहते हैं।

ये खुली बेईमानी और सिद्धान्त का खून नहीं तो और क्या है? पुराने मन्त्रियों की तरह शायद हमारे नये मन्त्री भी जाति के खयाल में बहुत आगे नहीं बढ़े हैं। शायद वह अपने-अपने पिट्ठुओं और अपने रिश्तेदार और नातेदारों को दरवाजे से नहीं, तो खिड़की के रास्ते पहुँचा देना चाहते हैं। मालूम होता है, हमारे नेता लोग समझ रहे हैं कि जो चाहेंगे, वह शान्तिपूर्वक कर देंगे। उनको यह मालूम नहीं है कि

वे बारूद के ढेर पर हैं। एक चिंगारी उन्हें ऐसे उड़ा देगी कि कहीं एक टुकड़े का भी पता नहीं रहेगा। चुनाव सिर पर आ गया है, जल्दी में पुराने नियमों को नहीं बदला जा सकता। इस बहाने को सुनकर तो बुखार बढ़ आता है। कौन कहता है कि आप इसी वक्त चुनाव करें? वोटर–लिस्ट तैयार हो गयी है, जाने दीजिये उसे चूल्हे–भाड़ में। छह महीने बाद चुनाव कीजिये, एक बरस बाद चुनाव कीजिये। अभी तो वर्त्तमान म्युनिसिपल बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड हैं। उन्हें रहने दीजिये। लेकिन जब चुनाव कीजिये तो बालिग वोटरों द्वारा और मनोनीत सभासद होने की बात को हटाकर।

अभी वोटरों की ऐसी अवस्था है कि दलित जातियाँ और मुसलमानों के प्रतिनिधियों के चुने जाने में बहुत कठिनाई है। इसलिए सम्मिलित चुनाव के साथ इन दोनों वर्गों की संख्या को नियत कर देना चाहिए जिसमें किसी को लेकर प्रगति–विरोधियों को वैमनस्य फैलाने का मौका न मिले।

हमें अपने देश में नये आर्थिक निर्माण की आवश्यकता है। और उसके लिए जैसे गम्भीर विचार और विस्तृत अध्ययन की जरूरत है, उसे आज तक हमारे कांग्रेस के नेता लोग अनावश्यक समझते आये हैं। ऐसी हालत में यह असम्भव है कि वे साहस करके लम्बा कदम आगे बढ़ायेंगे। वर्त्तमान बजट में से 27 लाख किसी काम के लिए निकाला जा सकता है। लेकिन न कोई योजना है, न कोई विचार है, इसलिए उस 27 लाख से प्रान्त का कर्ज लेना ही नहीं है। नव–निर्माण के लिए हमें एक–एक, दो–दो नहीं, दस–दस, बीस–बीस करोड़ कर्जे की जरूरत होगी। मन्त्री हो गये, पहले के मन्त्रियों से तनख्वाह कम ले ली, इसलिए कांग्रेस के त्याग का ढिंढोरा दुनिया में पिट ही गया और चुपचाप फाइल पर दस्तखत करते जाओ।

अर्थ–विभाग और स्थानीय स्वायत्त शासन, शिक्षा और नव–निर्माण, स्वास्थ्य और आबकारी ऐसे बड़े–बड़े विभाग हैं जो जोड़ा–जोड़ा करके एक–एक मन्त्री के माथे मढ़ दिये गये हैं। भला इन मन्त्रियों के पास फाइल पर दस्तखत करने के बाद समय ही कहाँ रह जायेगा? कब वह अपने विषय पर नये साहित्य पढ़ेंगे और कब उस पर नये तौर पर विचार करेंगे? बस उनके लिए तो एक ही रास्ता है कि उनके नीचे के जो ऊँचे अधिकारी हैं, वह उनके लिए पढ़ने–सोचने का काम करें और जैसा वह कहें, वैसा ही मान लें। अभी से देखने में आ रहा है कि जनता की किसी कठिनाई को जब मन्त्री के सामने पेश किया जाता है तो अपने नीचे के उच्च अधिकारियों को अपना वकील बनाकर वह सामने बैठा देता है। इन उच्च अधिकारियों ने कुछ पढ़ा–लिखा जरूर है, लेकिन उनका ज्ञान सिर्फ कागज का ज्ञान है। नव–निर्माण धरती की बात है, किताब की बात नहीं। किताब से सिद्धान्त

मालूम हो सकते हैं। और ये सिद्धान्त भी धरती से पैदा किये गये हैं, यद्यपि दूसरे देश, दूसरी आब-हवा और दूसरे समाज में। किन्तु, वे सिद्धान्त तब तक बेकार हैं जब तक वह हमारी धरती, हमारे देश, हमारी आब-हवा और हमारे समाज से मिलकर फिर इन्हें नया न कर लिया जाये। क्या जरूरत है कि चार ही मन्त्री बनाये जायें? यह दिखलाने के लिए कि दो ही हजार में हमारे मन्त्री काम कर लेते हैं? अगर चार हजार लगता हो और उससे फायदा कई गुना ज्यादा हो तो इस दो हजार की कमी से फायदा? आपने क्यों नहीं आठ मन्त्री रखे? क्यों न एक-एक विभाग एक मन्त्री को दिया जाये जिससे उनके ऊपर फाइल का बोझ कम होता और उन्हें कुछ लिखने-पढ़ने और सोचने-समझने का मौका मिलता। कहते हैं, चार से आठ करने में कितने ही लोग झगड़ा करने को तैयार हो जाते हैं। झगड़ा क्या खाक पैदा करते? झगड़ा तो तब पैदा होता है जब कि योग्यता हो या ना हो, लेकिन हर एक नेता अपनी जाति के लोगों को भरना चाहता है। दलित और मुसलमान के प्रतिनिधि को रखना तो इस दृष्टि से जरूरी है कि उस वर्ग के राष्ट्र-विरोधियों को वैमनस्य पैदा करने का मौका न मिले।

लेकिन राजपूत और ब्राह्मण, कायस्थ और भूमिहार में इस जाति के खयाल करने की क्या जरूरत? झगड़े की जड़ खुद ही आप तैयार करते हैं और फिर उसी का बहाना बनाकर गलत रास्ता पकड़ते हैं। जब तक कांग्रेस के नेता जात-पाँत के खयाल को नहीं छोड़ते हैं, तब तक यह बुराई दूर ही नहीं हो सकती। वे राष्ट्र-निर्माण पर बड़े हल्के दिल से सोचते हैं। वे समझते हैं कि हम अपनी-अपनी जाति के अगुवा भी बने रहेंगे और राष्ट्र के भी। इस खयाल को उन्हें छोड़ देना पड़ेगा। नेताओं के लिए सबसे अच्छा रास्ता यह है कि सभी कांग्रेस नेता जात-पाँत तोड़कर आपस में शादी-ब्याह का सम्बन्ध जोड़ें।

जब भूमिहार का समधी राजपूत होगा और कायस्थ का दामाद ब्राह्मण होगा तो ये झगड़े रहेंगे ही नहीं। आप अपनी हजार बरस की बेवकूफियों को साथ लेकर हमारी आजकल की जटिल समस्याओं को हल करना चाहते हैं, सो नहीं होगा। कमजोरियाँ आपके भीतर पड़ी हुई हैं। बाज वक्त आप उनके अस्तित्व का अनुभव भी करते हैं। फिर सोच लेते हैं, यह तो वैयक्तिक है। चाहे आप ब्रह्मचारी हों या नहीं, चाहे शराबी हों या परहेजगार, चाहे मांसाहारी हों या शाकाहारी, आपके राष्ट्रीय कार्य से उसका कोई उतना सम्बन्ध नहीं। लेकिन छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए भीतर की गुटबन्दी, जात-पाँत का खयाल, नौकरियों के दिलाने और सभासदों के मनोनीत करने में यदि आप कुपथ ग्रहण करते हैं, तो राष्ट्र के लिए यह सबसे बड़ा पाप है। जात-पाँत का खयाल हमारी कांग्रेस की संस्थाओं में सबसे बड़ी हानिकारक चीज है और इस भयंकर बीमारी में हमारे छोटे-छोटे कार्यकर्त्ता ही नहीं

फँसे हुए हैं, इसमें तो चोटी के नेता लोग भी शामिल हैं और वही हमारे राजनीतिक जीवन की सबसे बड़ी गन्दगी है। नौजवानों को इस बारे में अपनी राय पक्की कर लेनी चाहिए और बिना किसी मुलाहजा–मुरौवत का खयाल किये इसका विरोध करना चाहिए। अभी तक तो हमारे सभी राजनीतिक प्रोग्राम कल्पना–जगत में थे। लेकिन अब तो ठोस धरती पर आ गये हैं। कांग्रेस के नेताओं के हाथ में सरकार की बागडोर है।

यदि यह खयाल ऐसा ही बना रहा तो, यदि कांग्रेस को तबाह न कर देगा तो कमजोर और बदनाम जरूर कर देगा। लोग जात–पाँत का खयाल करके अपने लायक भाई–बन्धुओं को नौकरी दिलवायेंगे और बदनाम होगी कांग्रेस। पिछले मन्त्रियों ने ऐसी बहुत–सी बेईमानियाँ की हैं। कितने ही निकम्मे आदमियों को प्रोफेसर और डाक्टर जैसे दायित्वपूर्ण पदों पर नियुक्त कर दिया गया है। वहाँ जाकर वे मोटी–मोटी तनख्वाहें लेते हैं, बैठे–बैठे मक्खियाँ मारते हैं और यदि कुछ और करते हैं तो चापलूसी, घूसखोरी, पक्षपात और सामाजिक वैमनस्य का फैलाव। यदि कांग्रेस वाले इन वैयक्तिक स्वार्थों को सामने रखेंगे तो जैसे डिस्ट्रिक्ट बोर्डों और म्युनिसिपैल्टियों के रुपये बेईमान मेम्बर और धोखेबाज ठेकेदारों द्वारा उड़ाये जाते हैं, वही बात सरकार में होगी। म्युनिसिपैल्टियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में देखते नहीं हैं, आज 50 हजार रुपया लगाकर एक मील की सड़क बनती है और तीन महीने बाद उसमें गड्ढे पड़ जाते हैं। ईंटों की रोड़ी बिछा दी गयी, उसे कुछ थाप–थूप दिया गया और यदि शहर और कस्बे की बात हुई, तो उस पर कुछ पीपे कोलतार के भी लुढ़का दिये गये। ओवरसियर और इंजीनियर आँख से सारी बेईमानी को देखते हैं, लेकिन तब भी रिश्वत के लाभ से या मेम्बर या चेयरमैन के डर से ठेकेदार के पक्ष में अपनी रिपोर्ट दे देते हैं।

जहाँ देखिये, वहीं रिश्वत, नजराना, गन्दगी, सिफारिश का ही बाजार गर्म है। और कांग्रेस वालों ने जाकर अगर जात–पाँत के खयाल को न छोड़ा तो उसमें कोई सुधार होने की नौबत नहीं, क्योंकि सुधार एक मोटे तौर से सिद्धान्त पर लेक्चर देने से थोड़े ही होगा। गन्दगियों के हटाने के लिए कभी कायस्थ भाई को हेड–क्लर्की से बर्खास्त करना पड़ेगा, कभी किसी भूमिहार भाई को डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्टी से जवाब देना पड़ेगा, सभी नालायक, जो किसी न किसी तरह से अपनी जगहों पर पहुँच गये हैं, अगर सारी रिश्वत और शैतानी करते जा रहे हैं, वे आखिर किसी न किसी मन्त्री या मेम्बर के जाति भाई ही होंगे। ढूँढ़ने–ढाँढ़ने पर कोई न कोई उनका रिश्ता भी साबित हो जायेगा। यह जात–पाँत, खयाल रखिये, कोई भी सुधार नहीं होने देगी। बल्कि पहले तो हरेक विभाग के मुखिया अंग्रेज होते थे और उनके भाई–बन्धुओं की संख्या हिन्दुस्तान में बहुत कम थी। इसलिए बहुत बार वे योग्यता

का भी खयाल रखते थे। और अब, जब सभी विभागों के अध्यक्ष भारतीय हैं और उन्हीं के भाई-बन्धु सरकारी नौकरियों, सार्वजनिक संस्थाओं में बैठे सभी गन्दगियों को फैला रहे हैं, उनको हटाना कैसे सम्भव होगा, यदि जाति का खयाल नहीं हटा।

हमारे कांग्रेसी नेता और मन्त्री लोग हमें क्षमा करेंगे, यह कड़ी सच्चाई कहने के लिए। लेकिन जिस खतरे की तरफ उनका रुख है, यदि उसे रोकने के लिए यह नहीं किया गया, तो यह देश के लिए हानिकारक बात होगी।

संक्षेप में मन्त्रियों को चाहिए कि किसानों के हक के लिए लड़ें और जमींदारी प्रथा को जल्दी से जल्दी उठवायें। सरकारी नौकरियों और सार्वजनिक संस्थाओं में जितनी गन्दगियाँ हैं, उनके पीछे लाठी लेकर पड़ें। बालिग वोटरों द्वारा चुनाव और मनोनीत सभासदों को रोकना निश्चित करें। यदि ऐसा न करेंगे, तो कांग्रेस में फूट होना निश्चित है। किसान, मजदूर और साम्यवादी महज कांग्रेसियों के गुलाम नहीं हैं जो हरेक बात में उनकी 'हाँ' में 'हाँ' मिलाते रहें।

* * *

6

जमींदारी नहीं चाहिए

शुक्रवार (अगस्त 1931) को बिहार के जमींदारों की जो सभा हुई थी, वह उनकी उपस्थिति और उत्साह की दृष्टि से अभूतपूर्व थी। 'इण्डियन नेशन' के अनुसार 'प्रान्त' के प्रत्येक कोने से सैकड़ों की संख्या में जमींदार आये थे और बहुत बड़ा हाल और बाहर का ओसारा ठसाठस भरे हुए थे। बड़े-बड़े उपाधिधारी राजा और महाराजों के साथ छोटे से छोटे जमींदार भी कन्धे से कन्धा भिड़ाकर जमींदारों की उन बहुसंख्यक समस्याओं को हल करने के लिए उत्सुक थे जो आज उस समूचे वर्ग के सामने उपस्थित हैं। उद्देश्य की महत्त्वपूर्ण एकता उनमें दृष्टिगोचर हो रही थी जिसने एक सामान्य भय की छाया के कारण समुदाय, जाति और सम्प्रदाय के सभी बन्धनों को छिन्न-भिन्न कर दिया था।

अब तक बिहार के जमींदार अपने अन्य प्रान्त के भाइयों के समान अपने समय की सरकार की शक्ति की बहुत आशा रखते थे, क्योंकि कांग्रेस का आदर्श और इसका कार्यक्रम उनके लिए एक ऐसा स्वप्न था जो कभी पूरा होने वाला न था। इसलिए स्वयं जमींदारों में ही अपनी सभा के सदस्य बनने में भेदभाव था। छोटे जमींदारों को बड़े जमींदार अपने में गिनते ही न थे। 'इस जमाने में जमींदार सभा' केवल महाराजों, राजों और बड़े-बड़े जमींदारों की थी। वे अपने वर्ग में भी समानता का स्वप्न नहीं देखते थे। अब उनके सभापति का यह कहना बहुत अनुचित मालूम होता है, 'इस शोचनीय अवस्था का एक सबल कारण यह भी है कि हम उस प्रजातन्त्र के भाव को, जिसकी तरफ देश बढ़ रहा है, समझने में असमर्थ रहे हैं।'

भारतवर्ष में प्रजातन्त्र के लिए वे उपयुक्त दिन नहीं थे। प्रजातन्त्र का प्रचार करना निर्दोष काम नहीं समझा जाता था। उस समय जमींदारों ने अपने स्वार्थ-साधन के लिए जो उचित समझा, उसका उत्साह से सम्पादन किया। यह कहना बिल्कुल सच नहीं है कि बहुत वर्षों तक हम लोग राजनीतिक आन्दोलनों के केवल मौन दर्शक मात्र थे, क्योंकि हम लोगों को गत सरकार की प्रतिज्ञाओं में

आत्मरक्षा का विश्वास था। अतएव हमें प्रतिदिन अपनी पुरानी परम्परा और कानून के अनुसार कार्य करने में ही सन्तोष रहा। जमींदार केवल मौन दर्शक ही नहीं थे, वे राजनीतिक आन्दोलनों के समय सरकार के सक्रिय समर्थक भी थे, वे अमन सभाओं के संस्थापक एवं संचालक थे और जन एवं धन थे। स्वतन्त्रता के आन्दोलनों को कुचल डालने में पुलिस के सहायक थे। जब गोलियाँ चलती थीं, तब भी वे मरे और घायल मनुष्यों के बगल में नहीं दिखायी पड़ते थे, वरन इसके प्रतिकूल वे पुलिस का ही भोजन और पान से सत्कार करते हुए पाये जाते थे। निस्सन्देह 'देशभक्ति किसी विशेष समुदाय या वर्ग की ही वस्तु नहीं है।' किन्तु जमींदार अपने स्वार्थ के कारण राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने से बिल्कुल ही पृथक रहते थे। यद्यपि देश के असंख्य निवासियों के लिए स्वतन्त्रता का आन्दोलन अत्यन्त आवश्यक था और जिसमें जमींदारों को पूर्ण रूप से भाग लेना चाहिए था, किन्तु अब तो उनका भाग लेना एक आवश्यक काम हो गया है।

जमींदारों की ओर से बहस करते हुए महाराजाधिराज कहते हैं, 'हमको विश्वास है कि हमारे प्रधानमन्त्री इस बात को स्वीकार करेंगे कि जमींदारों ने भी देश की उन्नति में गत वर्षों में भाग लिया, क्योंकि हम लोग विदेशी नहीं हैं और हमारा सुख और दुःख देश के सुख और दुःख पर निर्भर करता है।' जमींदारों ने भाग लिया है? और किसमें? क्या देश की उन्नति में? सचमुच ही यह कहना बहुत साहस का काम है, विशेषकर उस समुदाय का जो सदैव विदेशी शासकों के साथ रहा और जिसके स्वार्थ के लिए उसका जन्म हुआ था। उन लोगों ने अगर कुछ किया है तो अपने स्वार्थमय उपभोगों में तल्लीन रहे हैं और लोगों के कष्ट में वृद्धि की है। क्या जमींदारों ने बिहार की राष्ट्रीय कला में मदद पहुँचायी है? क्या उन्होंने राष्ट्रीय संस्कृति की अभिरुचि उत्पन्न की है? वे कहते हैं कि वे नृत्य और संगीत के बड़े संरक्षक रहे हैं, किन्तु उनकी संरक्षकता क्या कला के निमित्त थी? ऐसे लोगों से कला और साहित्य की उन्नति की आशा रखना बिल्कुल व्यर्थ है।

जमींदारी प्रथा को उठा देने में प्रतिकूल बहस करते हुए महाराजाधिराज ने कहा, "मैं इस सिद्धान्त को मानने के लिए तैयार नहीं कि जमींदारी प्रथा नाश कर देने से किसानों का हित होगा। जमींदारी प्रथा बहुत विचार के बाद आरम्भ की गयी थी और इसको उठा देने से प्रान्त का सारा सामाजिक एवं आर्थिक संगठन कड़कड़ाकर चूर्ण हो जायेगा। इस प्रकार की चेष्टा से अव्यवस्था एवं अशान्ति फैलेगी तथा जमींदारों और किसानों की ही भयावह परिस्थिति हो जायेगी।" निस्सन्देह जमींदारी प्रथा के नाश से किसानों की आर्थिक एवं मानसिक अवस्था सुधर जायेगी। जमींदारी प्रथा गरीब किसानों की हीनावस्था का प्रधान कारण है। गाँवों में गरीब लोगों के असंख्य दुःख के कारण हैं। जमींदारों के सामने उनकी

अवस्था गुलामों से बढ़कर नहीं है। जमींदारों की आज्ञा पाते ही उनको बेगार करनी पड़ती है और यहाँ तक कि उनका जीवन और प्रतिष्ठा भी प्रायः जमींदारों की विषय-वासना और क्रोध से सुरक्षित नहीं है। यदि जमींदारी प्रथा में कोई और बुराई न होती तो भी लोगों में इतनी नीच मनोवृत्ति पैदा करना ही इसके नाश करने के लिए काफी कारण था।

यह सबको अच्छी तरह मालूम है कि जमींदारी प्रथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपनी मालगुजारी वसूल करने के लिए कायम की थी, क्योंकि उन झंझटों के जमाने में किसानों से लगान वसूल करना कठिन था। जमींदारी प्रथा न तो किसानों की आर्थिक भलाई के लिए और न देश की भलाई के लिए कायम की गयी थी। इन जमींदारियों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि वह जमीन पर व्यर्थ का भार है, क्योंकि जमीन इतनी बड़ी जनसंख्या का पालन करने में असमर्थ है। पूँजीपतियों को तो अपने कल-कारखानों के प्रबन्ध में कुछ काम भी करना पड़ता है, किन्तु जमींदारों को तो अपनी आमदनी हासिल करने में कुछ भी नहीं करना पड़ता। इतनी आमदनी नियत है और सदैव इनकी इच्छा पर निर्भर है। इन बड़े जमींदारों के सम्बन्ध में पाश्चात्य शिक्षा हानि पहुँचाने वाली ही हुई है, क्योंकि पाश्चात्य जमींदारों में भी जो कुछ बुराइयाँ प्रचलित हैं, वे इनमें भी प्रवेश कर गयी हैं। जमींदार आलसी और दूसरों के श्रम पर निर्भर करने वाले के सिवाय कुछ नहीं हैं। सच पूछिये तो जमींदारी प्रथा न तो सामाजिक और न आर्थिक दृष्टि से ही उचित ठहरायी जा सकती है। जब जनता के सुख के सामने कोई विघ्न आता है तो उसका नाश करना आवश्यक है। अव्यवस्था और अशान्ति का भय भी उन कार्यकर्त्ताओं को, जो अपने लक्ष्य पर पहुँचने का दृढ़ निश्चय कर चुके हैं, भयभीत नहीं कर सकती। अव्यवस्था और अशान्ति की धमकी उस समाज की जिसकी संख्या (गणना) बिल्कुल ही तुच्छ है, जैसे कि बिहार के जमींदारों की है और जिनके पास न तो नैतिक और न राजनीतिक शक्ति है, विचित्र है और उस वर्ग के लिए आत्मघातिनी है। हम यह जानते हैं कि हमारे प्रान्त में कुछ ऐसे जमींदार हैं जिन्होंने गत चुनाव के समय बहुत कुछ अशान्ति से काम लिया और अपना जमींदारी रोब-दाब अब भी जारी रखना चाहते हैं।

लेकिन उनको यह समझ लेना चाहिए कि ऐसा करना उनकी मृत्यु का कारण होगा। उनको यह जान लेना चाहिए कि केवल प्रार्थना और विनम्रता से ही उन्हें कुछ साँस लेने की जगह मिल सकती है। क्या उन लोगों ने अभी यह नहीं समझा है कि उस वर्ग का समर्थन उन्होंने खो दिया जो आज तक उनका समर्थन करता आया है? इसमें शक नहीं कि उनके पास रुपये की शक्ति है, किन्तु यदि इसे वे देश की उमंगों को कुचलने में खर्च करेंगे तो यह भी उनके पास नहीं रहने पायेगी।

उनके सभापति ने कहा, "हम लोग आसानी से अपने न्यायपूर्ण अधिकारों को किसी वर्ग की चाह की प्रतिष्ठा करने के लिए नहीं छोड़ सकते, चाहे वह वर्ग कितना ही बहुसंख्यक और चिल्लाने वाला क्यों न हो।" यह जमींदारों की एक दूसरी विनम्र पर जोरदार धमकी है। कृपया वे यह तो बतलायें कि उनके न्यायपूर्ण अधिकार कौन-से हैं? उन्होंने अपने मालिकों के लिए उपयोगिता का जीवन बिताया है, अब मालिकों में परिवर्तन हो गया। अब वे फिर अपने अस्तित्व को न्यायपूर्ण सिद्ध करें। इस वर्ग के जितने पुरुष या स्त्री हैं, उनका अस्तित्व केवल समाज की दया ही पर निर्भर है।

देर करने की चालें व्यर्थ हैं

देर करने की चालें न चलेंगी। अपर चैम्बर से उन्हें बहुत आशा न रखनी चाहिए। सबसे पहले तो अपर चैम्बर को सरकार के किसी प्रस्ताव को अनिश्चित काल तक स्थगित करने का अधिकार नहीं है। उनको निर्दिष्ट समय के भीतर किसी बात का निपटारा कर देना होगा, नहीं तो शीघ्र ही दोनों कौंसिलों की सम्मिलित बैठक होगी। अगर यह भी मान लें कि अपर चैम्बर की चालें सफल हो जायें तो भी सरकार इसको चुपचाप बर्दाश्त न कर लेगी। वह दूसरा चुनाव करवा सकती है जिसमें जमींदारों की बुरी गति होगी।

दूसरी बात यह याद रखने की है कि कांग्रेस छोटे जमींदारों के साथ बड़ों से बिल्कुल भिन्न व्यवहार करना चाहती है। छोटे जमींदार जिनकी आमदनी 10,000 से कम है, वर्त्तमान सरकार के हाथों से बड़े जमींदार की अपेक्षा बहुत अच्छे व्यवहार की आशा रख सकते हैं। उन्हें कृषि-टैक्स का भय न होना चाहिए। दूसरी तरफ उनको रैयतों का खयाल रखना चाहिए और सरकार को किसानों की दशा सुधारने वाले कानूनों से सहायता पहुँचानी चाहिए। कला-कौशल सम्बन्धी जो नयी योजनाएँ तैयार हो गयीं, उनमें उन्हें भविष्य के लिए बहुत कुछ सुअवसर प्रदान किया जायेगा। जब समाज की सम्पत्ति का राष्ट्रीय या सामाजिक रूप देने का भी मौका आयेगा, तो यह विचार किया जायेगा कि इनके द्वारा छोटे जमींदारों को विशेष कष्ट न पहुँचे, किन्तु यदि ये बड़े जमींदारों के द्वारा बहकाये जायेंगे, जो कि अब तक उनको अपने बराबर नहीं मानते थे, तो इसका आवश्यक परिणाम इन्हें भोगना होगा। अगर छोटे जमींदार विचारपूर्वक अपने भविष्य को सोचेंगे, तो उन्हें यह पता चल जायेगा कि उनका हित है। कांग्रेस मन्त्रिमण्डल जनता के हित के लिए जो कुछ कानून बनायेगा, उसी के समर्थन में। जमींदारों को यह आशा नहीं रखनी चाहिए कि वे कांग्रेस में किसी तरह का भेद डाल सकेंगे। बल का प्रयोग उनके वर्ग की हत्या करने वाला होगा। ऊपर की कौंसिल में चालें चलकर वे कुछ देर

करा सकते हैं; लेकिन अन्त में जो बातें मैंने कही हैं, उसमें कोई भेद नहीं पड़ेगा।

यद्यपि यह आशा करना बिल्कुल फिजूल है कि अदृष्ट रूप से ब्रिटेन की सरकार या साम्राज्यवादी उनकी सहायता करेंगे, तथापि शायद उनके हृदयों में ऐसी आशा हो, वे शायद यह सोच रहे हों कि इस विधान को उठाकर या कांग्रेस मन्त्रिमण्डल को तोड़कर वे अपने मतलब को साध सकेंगे। लेकिन वह बिल्कुल व्यर्थ है। सरकार को कांग्रेस के साथ सुलह करनी ही पड़ेगी। एक या दो बार कांग्रेस मन्त्रिमण्डल को तोड़ने में जमींदारों का उद्देश्य सिद्ध न होगा। मिस्र का वफ्द मन्त्रिमण्डल दो बार तोड़ा गया, किन्तु अन्त में ब्रिटिश सरकार को स्थायी शन्ति के लिए प्रार्थना करनी ही पड़ी और पीछे हम लोग वफ्द नेताओं और मिस्र के प्रधानमन्त्री का ब्रिटेन के बड़े से बड़े पुरुषों द्वारा स्वागत होते पाते हैं। स्वयं ब्रिटेन ने ही मिस्र का नाम राष्ट्रसंघ में सदस्य बनाने के लिए उपस्थित किया और इस समय मिस्र राष्ट्रसंघ में इंग्लैण्ड और दूसरे राष्ट्रसंघ के सदस्यों के साथ बराबरी की हैसियत रखने वाला सदस्य है। मिस्र का भाग्य पहले के विद्रोही वफ्द के हाथ में है। ब्रिटेन की दूरदर्शिता से सब परिचित हैं और यह सभी को मालूम है कि अभी या कुछ देर से ब्रिटेन कांग्रेस के साथ अवश्य सुलह करेगा।

सबसे अच्छा जमींदारों के लिए रास्ता यह है कि कुछ ले-देकर वे अपने हक को छोड़ दें। उस द्रव्य के साथ वे नये जीवन का आरम्भ कर सकते हैं और देश में औद्योगिक योजना में अपने रुपये लगा सकते हैं। स्वार्थ-रक्षा के लिए ब्रिटेन के जमींदारों का उदाहरण देना व्यर्थ है। ब्रिटेन के अधिकांश लोग औद्योगिक क्षेत्रों में लगे हैं। कम से कम आधे किसान भी यदि औद्योगिक क्षेत्रों में रखे जा सकें तो हमारे जमींदार ब्रिटेन के जमींदार का उदाहरण दे सकते हैं। देश में औद्योगिक योजना के लिए जमींदार प्रथा का नाश होना एक बड़ा भारी आशीर्वाद होगा, क्योंकि इस अनुत्पादन के व्यवसाय में कोई रुपया न लगायेगा; और जो रुपये मिलेंगे; वे नये और औद्योगिक व्यवसायों में लगाये जायेंगे तथा हजारों आलसी दिमाग-हाथ अपनी शक्ति राष्ट्रीय उद्योग धन्धों की उन्नति करने में लगाने के लिए बाध्य होंगे।

* * *

7

किसानो सावधान!

भारतीय किसानों की आर्थिक व्यवस्था कितनी गिरी हुई है, इसका पता उन्हें नहीं है। जो लोग उसकी श्रेणी से बाहर के हैं, उनको भी इसका खयाल नहीं हो सकता। हमारे किसानों की गरीबी की तुलना के लिए हमें भारत से बाहर के किसानों की आर्थिक अवस्था जानने की ज़रूरत है। ऐसी गिरी हुई दशा में पहुँचे हुए किसानों को कांग्रेस ने जागृति, जीवन और आत्मसम्मान का सन्देश दिया, वे जागे। वैसे तो भारत के और प्रान्तों में भी किसानों में जागृति हुई, लेकिन बिहार के किसानों की जागृति अद्वितीय है। यहाँ वे बहुत कुछ संगठित भी हैं। बिहार में बड़ी-बड़ी जमींदारियों और इस्तमरारी बन्दोबस्त होने के कारण किसानों और जमींदारों का विभाग स्पष्ट था। दोनों श्रेणियाँ अपने स्वार्थ, सुख-दुःख और सामाजिक सम्बन्ध में एक-दूसरे से इतनी भिन्न थीं कि कांग्रेस आन्दोलन को उस विभाजक सीमा पर पक्की मुहर लगाने के लिए बहुत प्रयत्न नहीं करना पड़ा। उसे सिर्फ धूमिल बातों को स्पष्ट करा देना काफी था और वह उसने करा दिया। बिहार के किसानों की शक्ति कितनी प्रबल है, इसका खयाल शायद हमारे नेता, जो आज घुल-मिलकर बड़े-बड़े जमींदारों के साथ चाय-पानी करते तथा हाथ मिला रहे हैं, उनको भी नहीं और साधारण किसान को भी इसका पता नहीं है। हाँ, हमारे किसान-कार्यकर्त्ता इस शक्ति को जानते हैं और पूरी तौर से उस शक्ति का ज्ञान तो साम्यवादियों को ही होना चाहिए, और है। किसानों की कठिनाइयाँ और कष्ट काल्पनिक नहीं हैं जिनको कि आप लच्छेदार बातों या बहानों से दूर कर सकते हैं या उन्हें सन्तुष्ट कर सकते हैं। किसान धोखे में नहीं आ सकते, क्योंकि वह जीभ हिला देने या स्याही से कागज काला कर देने मात्र से सुखी नहीं किये जा सकते। 1921 से ही उन्होंने कांग्रेसवालों के उपदेश सुने हैं और इसका भी उन्होंने कुछ ज्ञान प्राप्त किया कि कैसे वे अन्न-वस्त्रविहीन हो कष्टमय जीवन बिता रहे हैं। वे कांग्रेस के मन्त्रियों की एक भी तसल्ली देने की बात नहीं सुनेंगे, वे तो पूछेंगे - पहले आधा पेट खाना मिलता था, आज हमें पौन पेट खाना दे रहे हो या नहीं?

पहले हमें साल-भर एक धोती से गुजारा करना पड़ता था, आपकी वजह से हमें धोती के साथ एक अंगौछा भी मिलने जा रहा है या नहीं? सारांश यह कि वे आपके काम को प्रत्यक्ष देखना चाहेंगे।

सुनते हैं, आप जमींदारों के साथ समझौता करना चाहते हैं। मन्त्रियों में जमींदार ही अधिक हैं, इसके बारे में भी लोग कानाफूसी कर रहे हैं। मेरी समझ में मन्त्रियों पर स्वार्थी होने का लांछन नहीं लगाया जा सकता। लेकिन सम्बन्ध, दोस्ती और हेल-मेल काफी प्रभाव डालते हैं। लेकिन दुर्भाग्य से तो हमारे यहाँ शादी-सम्बन्ध और जात-पाँत का सम्बन्ध भी इस विषय में बड़ा बुरा असर करता है। जमींदारों को हमें हटा देना है और जितनी जल्दी हो उतनी। उनके साथ हमारे नेता समझौता करना चाहते हैं और वह समझौता निश्चय ही किसानों के नाम से किया जायेगा। किसानों के वोट से ही कांग्रेस ने गवर्नमेण्ट को अपने हाथ में लिया है। किसान ही मन्त्री और मेम्बर बनाने वाले हैं। इसलिए वे जो समझौता करेंगे, उसे किसानों की ओर से समझा जायेगा और यह समझौता जमींदार लोग अपने अधिकार के चार्टर के तौर पर पेश करेंगे।

किसानों के लिए सबसे खतरनाक समय इस वक्त आया है, क्योंकि उनकी तरफ से गये प्रतिनिधि कुछ करने का अधिकार रखते हैं। और अब, जब वे कुछ कर देंगे, उनको हटाने के लिए बहुत कठिनाई झेलनी पड़ेगी। उस दिन असेम्बली के उद्घाटन के समय 50 हजार किसानों की भारी भीड़ को देखकर जमींदारों के कलेजे पर साँप लोट जाना तो स्वाभाविक ही था, लेकिन उससे हमारे नेताओं को भी कम अरुचि नहीं हुई। वे कहते हैं - क्या किसानों को हम पर विश्वास नहीं है? क्या हम किसानों के आदमी नहीं हैं? उसके उत्तर में मैं कहूँगा कि जिन लोगों को भीतर की बातें कुछ अधिक मालूम हैं, वे तो इसी वक्त से चिन्तित और सतर्क हो गये हैं और साधारण जनता को भी यह जानने में देर न लगेगी कि अगर किसान सजग न रहेंगे, और अपने अधिकार के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी करने को तैयार न होंगे, तो धोखा खायेंगे। बड़े-बड़े जमींदार खूब अच्छी तरह जानते हैं कि उनकी श्रेणी के लिए यह जन्म-मरण का सवाल है। उनके पास अगर हथियार होते तो वे खुली लड़ाई लड़ते, लेकिन उसके लिए तो गुंजाइश ही नहीं। एक बड़े प्रभावशाली जमींदार नेता ने तो, चाहे इसे बेवकूफी समझिये, एकाध कांग्रेस मन्त्रियों को रास्ते से हटा देने की राय भी पेश की थी।

सोचिये, कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल जो बहुत डर-भय खाकर जमींदारों की आमदनी पर कर बैठाने जा रहा है, उससे जमींदारों को 30-40 लाख रुपया और देना होगा। हमारे हिसाब से तो उसे दो करोड़ होना चाहिए। तो क्या इतने रुपयों को जमींदार खुशी से जाने देंगे? और इससे भी बढ़कर तो खुद जमींदारी प्रथा के ऊपर

ही नंगी तलवार लटक रही है! तो क्या इसके लिए वे चुपचाप रहेंगे? वे अपनी सारी शक्ति लगा रहे हैं। साम, दाम, दण्ड, भेद सभी सोच रहे हैं। जहाँ रिश्वत देने की जरूरत होगी, वहाँ वे लाखों का तोड़ा खोल देंगे। जहाँ जात-भाई के सवाल से काम चलेगा, वहाँ उसके उपयोग से भी वे बाज नहीं आयेंगे। किसानो, सावधान हो जाओ और आँख खोलकर देखते रहो कि तुम्हारे प्रतिनिधि तुम्हारे विरुद्ध कोई काम न कर सकें।

कांग्रेस पहले अपने प्रतिनिधियों को गवर्नमेण्ट के लोगों की चाय-पार्टी तथा उनसे बहुत हेल-मेल मिलाने के विरुद्ध रही। मैं समझता हूँ कि वही बात अब कांग्रेस को - जिसकी शक्ति किसानों पर निर्भर है - अपने प्रतिनिधियों को जमींदारों से घनिष्ठता पैदा करने से रोकने के लिए बरतना चाहिए नहीं तो इसका बहुत बुरा असर होगा।

किसानों के इस पहले प्रदर्शन से ही ऊपर के कुछ नेता चिढ़ गये हैं। अभी तो उन्हें इससे बड़े-बड़े प्रदर्शनों के लिए तैयार रहना चाहिए। शायद कल कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल दो-चार बहाने ढूँढ़कर सलामी-सर्टिफिकेट को भी रखने जा रहा है। जमींदारी प्रथा के उठाने तथा जमीन पर कम से कम जोतने वाले ही का हक दिलाने की बात तो दूर रही, अगर कोई इस तरह की कमजोरी मन्त्रियों ने दिखलायी तो किसान फिर अँधेरे में नहीं रहेंगे। पिछला प्रदर्शन तो एक-ब-एक हुआ था। उसके लिए विशेष संगठन या प्रचार किया गया था। लेकिन अगले जाड़ों की बैठक में सारे प्रान्त के किसानों का एक संगठित प्रदर्शन पटना में होना चाहिए। इसके लिए किसान कार्यकर्ताओं को पहले से तैयारी करनी चाहिए। बिहार प्रान्त के हरेक जिले से नहीं, हरेक थाने से चुने हुए किसानों की टोलियाँ पैदल चलें और उनके ठहरने आदि का स्थान पहले से निश्चित कर दिया जाये। कहाँ पर एक जिले की सारी टोलियाँ इकट्ठी हों, इसे भी पहले से तय कर लिया जाये और फिर सभी किसान कब पटना में एकत्रित होते हैं, इसका भी निश्चय कर लिया जाये। टोलियाँ राह चलते हर जगह किसानों के अधिकार और कर्तव्य का प्रचार करती आवें। साथ ही योग्य नेताओं के अधीन इतने दिनों की यात्रा में उन्हें अनुशासन का पालन करने तथा संगठित होने का भी अच्छा अवसर मिलेगा।

एक लाख किसानों को उस दिन पटना में जमा कर देना कोई मुश्किल न होगा। लेकिन संख्या चाहे जितनी हो, पूर्ण तथा संगठित होनी चाहिए। उनके जुलूस के देखने से ही, जिसमें मालूम हो जाये कि वे किस जिले, किस थाने से आये हैं, इसका भी प्रबन्ध होना चाहिए। किसानों की माँगों को स्पष्ट, सादे-सादे शब्दों में लिखकर हरेक थाने के अधिक से अधिक किसानों के दस्तखत या निशान करवाने चाहिए और ये सारे दस्तखत किये हुए कागज एक सन्दूक में बन्द कर उसे

दो किसान अपने कन्धे पर आगे–आगे ले चलें। उस बक्स के सामने कपड़े पर मोटे अक्षरों में कितने किसानों के दस्तखत हैं, उनकी संख्या तथा थाना और जिले का नाम रहना चाहिए जिसमें दर्शक को पूछने की जरूरत न हो।

एक जिले की टोली के इकट्ठा होने पर थाने–थाने की टोलियाँ आगे–पीछे चलें और हरेक थाने की टोली के साथ उसके दस्तखतों का बक्स हो। जिले की दस्तखतों की संख्या को जिले के साइन बोर्ड के साथ दिखलाया जाये और उसी तरह किसान–यात्रियों की संख्या को भी। यह सब इसलिए होना चाहिए कि लोग समझ जायें कि पटना में जितने लोग आये हैं, वे ही किसानों के अधिकार के लिए नहीं तैयार हैं, बल्कि उनके पीछे बहुत भारी जनसंख्या है और यदि उसे रोका न जाता तो प्रदर्शन कई गुना अधिक बड़ा होता।

किसानों और खेतिहर मजदूरों का अधिकार अन्त में आकर एक ही समस्या के दो रूप हैं – इसमें शक नहीं कि खेतिहर–मजदूरों की अवस्था शोचनीय है और उसका हल होना चाहिए। लेकिन हमें खयाल रखना चाहिए कि हम सभी क्रान्तियाँ एक साथ नहीं कर सकते। कोई सभी क्षेत्रों में एक साथ नहीं लड़ सकता। खेतिहर–मजदूरों को किसानों से लड़ाने के लिए जमींदार कोर–कसर बाकी नहीं लगा रहे हैं और जमींदारों को वोट दिलाने के लिए दौड़ने वालों या कांग्रेस का विरोध करने वाले लोगों के दिल में जिस प्रकार खेतिहर–मजदूरों के प्रति दया छलछला आयी है, उससे तो किसानों और खेतिहर–मजदूरों दोनों को सावधान हो जाना चाहिए।

बिहार ने कई बार देश का पथ–प्रदर्शन किया है, इस बार उसके किसान भारत के किसानों को रास्ता दिखायें।

* * *

8

अछूतों को क्या चाहिए?

अपने को उच्च वर्ग कहने वाले लोग हरिजनों के साथ जो व्यवहार करते हैं, वह किसी भी विदेशी के लिए, जो इस देश में न आ चुका हो, असह्य और समझ में नहीं आने लायक है। उन पर धार्मिक अत्याचार की पराकाष्ठा तो तब होती है जब उन्हें कोई ऐसा पेशा, जिसके द्वारा वे अपनी जीविका पैदा कर सकें, नहीं करने दिया जाता। पनसारी की दुकान, मिठाई की दुकान और भोजनालय (होटल) खोलने की तो बात ही नहीं, कपड़े और रासायनिक द्रव्यों की दुकान भी वे नहीं खोल सकते। यदि खोलें भी, तो कुछ ही दिनों में उनका दिवाला निकले बिना नहीं रहे। भारत की अधिकांश जनता की जीविका कृषि ही है, किन्तु बहुत कम हरिजनों के पास अपनी जमीन है। जिन थोड़े से हरिजनों के पास कुछ जमीन है भी, वह भी कुछ कट्ठे ही है, सिकमी, भावली प्रथानुसार वे जब चाहें बेदखल किये जा सकते हैं। इस शताब्दी के प्रारम्भ से हमारे कुछ नेताओं ने हरिजनों पर होने वाले अत्याचारों का विचार करना प्रारम्भ किया है। सच पूछिये तो महात्मा गाँधी के उत्थान के पूर्व हमारे इन भाइयों के अभ्युदय के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार ही नहीं किया गया था। किन्तु अभी इस विषय में जितना ध्यान दिया जाता है, वह काफी नहीं हैं। यदि भारतवर्ष के सारे मन्दिर अछूतों के लिए खोल दिये जायें तो भी वह समस्या हल नहीं हो सकती। भारतवर्ष की सीमा के बाहर उनकी दरिद्रता की उपमा मिल नहीं सकती। किन्तु भारत की सीमा के भीतर भी अछूतों की जो दरिद्रता है, वह अचिन्त्य है। हरिजन – जो अधिकतर खेत–मजदूर हैं – गुलामों से अच्छी परिस्थिति में नहीं हैं। थोड़े से रुपये उधार लेकर उन्हें अपना शरीर बेंचना पड़ता है। उनके मालिक, उनकी केवल वे ही आवश्यकताएँ पूरी करते हैं जिनसे वे केवल प्राण धारण कर सकें। पुश्तें बीत जाती हैं, किन्तु वह कर्ज कभी अदा नहीं होता। काम खोजने में उन्हें अपना स्वतन्त्र अधिकार नहीं। निस्सन्देह उनमें से कुछ दूसरे–दूसरे प्रान्तों, बंगाल आदि में, जीविकोपार्जन के लिए चले जाते हैं, किन्तु उनकी कमाई का एक बड़ा अंश उनके मालिकों और गाँव के सूदखोरों की

भेंट चढ़ जाता है।

भारतवर्ष के अन्यान्य ग्रामीणों की भाँति, उनको अपने ग्रामों से इतना प्रेम होता है कि अपनी दरिद्र झोपड़ियों का परित्याग करना उनके लिए असम्भव है। सहस्रों वर्षों से गाँव के कुलीन व्यक्तियों और उनके अनुचरों ने ऐसी प्रथा कायम कर रखी है जिनसे हरिजन बच नहीं सकते। राजदण्ड से बचना हरिजनों के लिए सम्भव हो सकता है, किन्तु इन अमानुषिक प्रथाओं के हथकण्डों से उन्हें छुटकारा नहीं। रहने, सोने, घर के पात्र, वस्त्र या छाता के उपभोग करने में भी बहुत तरह के बन्धन हैं। वे इन प्रथाओं के प्रतिकूल टस से मस नहीं कर सकते। यदि करें तो ग्राम-समाज उन्हें दण्ड दिये बिना नहीं छोड़ेंगे। नगरों में उन्हें कुछ स्वतन्त्रता मिलती है, किन्तु ग्राम का वायुमण्डल गलाघोंटू है।

यदि आप हरिजनों के प्रतिदिन के जीवन को ध्यानपूर्वक देखें तो यह समझ सकते हैं कि उनकी वर्त्तमान अवस्था ही दयनीय नहीं है, बल्कि उनका भविष्य भी बड़ा ही अन्धकारपूर्ण है। अतएव उसमें मौलिक परिवर्तन की आवश्यकता है। आर्थिक स्वतन्त्रता ही सभी स्वतन्त्रताओं की जननी है और उस स्वतन्त्रता की छाया भी इन अभागों से दूर रखी जाती है तो इनके उज्ज्वल भविष्य की आशा हम क्योंकर कर सकते हैं।

उनके लिए मन्दिरों के द्वार खोलने के लिए प्रचार करने में हमें समय नहीं खोना चाहिए। यह काम केवल व्यर्थ ही नहीं, बल्कि खुद हरिजनों के लिए खतरनाक भी है। यह पुरोहितों की चालाकी और धर्मान्धता ही है जो कि उनकी वर्त्तमान अधोगति का कारण है। इन सरल मनुष्यों को ऐसी सरल सस्ती औषधि न दीजिये। पुजारी, धर्म और मन्दिर को जहन्नुम में जाने दीजिये। अगर आपके सामने अपने देश और अपने लिए कोई सच्चा आदर्श है, तो उनकी आर्थिक विषमताओं का अध्ययन कीजिये और उनको दूर करने की चेष्टा कीजिये। हमारे प्रान्त में 65 लाख से अधिक हरिजन हैं। उनमें 5 लाख से अधिक किसान के रूप में नहीं भी रह सकते। अब प्रश्न यह है कि बाकी 60 लाख की दशा कैसे सुधारी जाये? हमारे बहुत-से जिलों में अधिकांश जमीन खेत हो चुकी है। उदाहरण के लिए, सारन जिले का क्षेत्रफल 2683 वर्गमील है जिसमें 2058 वर्गमील अर्थात 1317120 एकड़ में पहले से ही खेती होती है। 202 वर्गमील अर्थात 129230 एकड़ खेती के लायक नहीं है। केवल 165 वर्गमील अर्थात 105600 एकड़ जमीन ऐसी है जो खेती करने के लायक है। किन्तु फिर मवेशियों के लिए चरागाह का प्रबन्ध करना होगा। अगर समूची जमीन उनकी 2486468 जनसंख्या में बाँट दी जाये तो आधा एकड़ प्रति मनुष्य पड़ती है तो इतने से तो केवल जीवन-यात्रा भी नहीं चल सकती। अब इस जनसंख्या में 271000 अछूत हैं। इससे स्पष्ट है कि जब जमीन

की बचत नहीं पायी जा सकती जो इन दो लाख से अधिक खेतिहर–मजदूरों में बाँटी जा सके।

(1)

कृषि के लिए भूमि का प्रबन्ध

लेकिन सरकार एक बात कर सकती है। वह उन बड़े–बड़े जमींदारों, जिनकी जीविका खेती नहीं है, की बकाश्त जमीन को लेकर इन हरिजनों में बाँट सकती है। अधिक से अधिक जमीन, एक आदमी को कितनी मिलनी चाहिए, सरकार इसका निश्चय कर दे और अधिक से अधिक हरिजनों के साथ जमीन का बन्दोबस्त कर दे। लेकिन जैसा कि पहले कहा जा चुका है, बहुत–से बड़े–बड़े जिलों में, जैसे सारन, चम्पारन, दरभंगा और मुजफ्फरपुर में कृषि के लायक जितनी जमीन है, वह जोती जा चुकी है। अतएव हरिजनों में वह नहीं बाँटी जा सकती। लेकिन बिहार के और हिस्सों में कुछ ऐसे जिले हो सकते हैं जहाँ खेती के लायक जमीन है। सरकार को ऐसी जमीन का अन्दाज कर लेना चाहिए और उसे हरिजनों में बाँट देना चाहिए। यदि हम शीघ्रता से हरिजनों की दशा सुधारना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि हम उनके साथ उक्त प्रकार का नया बन्दोबस्त करें। इस प्रकार से गाँव के पुराने खयाल वालों की बाधाओं से हम हरिजनों को बचा सकते हैं। इससे उच्च वर्णवालों को बहुत–सी शिक्षाएँ मिलेंगी। राँची, हजारीबाग और पलामू इत्यादि जिलों में, जिनमें घनी आबादी नहीं है, बहुत से खेतिहर–मजदूर आसानी से बसाये जा सकते हैं, यदि सरकार इस मामले को गम्भीरता से अपने हाथ में ले। खेती के लिए 'अछूत' बहुत परिश्रमी मजदूर हैं और यदि सहयोग समितियों की सहायता से उनके परिश्रम का सच्चा और ठीक उपयोग किया जाये तो ऐसे प्रबन्ध के लिए जितने धन की आवश्यकता होगी, उसकी पूर्त्ति होने में देर न लगेगी, क्योंकि परिश्रम ही तो धन है।

(2)

गृह–शिल्प

शहरों और कस्बों में उनके लिए बस्तियाँ बसानी चाहिए। उन लोगों को ऐसे गृह–शिल्पों के उपयोगी तरीके सिखाये जाने चाहिए जिनमें कलें बिना बिजली के या बिजली के द्वारा उपयोग में लायी जा सकती हों। शहरों और कस्बों में आने पर वे गाँवों की संकीर्णता से मुक्त हो जाते हैं और यहाँ जीवन को नये तौर से आरम्भ कर सकते हैं। अगर वे आर्थिक दृष्टि से उन्नत बन जायें – शिक्षा प्राप्त करें और

स्वास्थ्य एवं सफाई का खयाल रखें तो छूत-छात का अस्तित्व बहुत दिनों तक नहीं रह सकता। इन आदर्श बस्तियों में यदि कोई उच्च वर्ण का कुटुम्ब रहना चाहे तो उसको इस शर्त पर रहने देना चाहिए कि वह हरिजनों के साथ बराबरी का व्यवहार रखे और उनके परिश्रम का अनुचित उपयोग न करे।

(3)

सरकारी कल-कारखाने

कांग्रेस ने अपने हाथ में प्रान्त के शासन की बागडोर ले ली है, किन्तु हमारी वर्त्तमान आवश्यकताएँ इतनी अधिक और साधन इतने कम हैं कि हमारे मन्त्रियों के लिए जनता की भलाई करने की चाह होने पर भी उनकी दशा सुधारना आसान काम न होगा। सरकार की लगभग तिहाई आमदनी आबकारी से होती है। वर्षों से कांग्रेस इस आमदनी के प्रतिकूल प्रचार कर रही थी। इस समूची आमदनी को इस समय त्याग देना व्यावहारिक नीतिज्ञता नहीं समझी जायेगी। किन्तु यदि वह समूची आमदनी रख ली जाये, तो राष्ट्र के पुनर्निर्माण के लिए वह काफी न होगी। हम लोगों को आमदनी का नया तरीका सोचना चाहिए और यदि कुछ विलासिता की चीजों के निर्माण, उदाहरणार्थ सिगरेट को सरकार के हाथों में दिया जाये तो सरकार की आय बढ़ सकती है। यूरोप के बहुत से देश सिगरेट पर विशेष कर लगाये हुए हैं; लेकिन हम लोगों के लिए जापान का आदर्श सामने रखना चाहिए जहाँ कि सिगरेट बनाने का समूचा व्यापार सरकार के हाथ में है। हम लोगों का प्रान्त भी वही काम कर सकता है। हमारे प्रान्त में तम्बाकू काफी उत्पन्न होती है। सरकार को यह व्यापार अपने हाथ में ले लेना चाहिए। वह पिछड़ी जातियों को ऐसे कारखानों में काम देकर सहायता पहुँचा सकती है। सारांश यह कि भविष्य की औद्योगिक योजना में सरकार हरिजनों को अधिक से अधिक आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करे।

* * *

9

खेतिहर–मजदूर

जब से किसान आन्दोलन ने जोर पकड़ा है, तब से जमींदार श्रेणी किसानों की शक्ति को कमजोर करने के बारे में विचार करने के लिए मजबूर हुई है। विशेषकर पिछले चुनाव के बाद जब उन्होंने देख लिया कि हुकूमत उनके हाथ से जा रही है जिनकी नींव किसानों पर है, तब से उन्हें और भी चिन्ता हो गयी है। भेद–नीति सबसे जबरदस्त और आसान नीति है। इसी के आधार पर जमींदारों ने खेतिहर–मजदूर आन्दोलन को वैसे ही उठाना चाहा जैसे कि पिछले चुनाव में उन्होंने त्रिवेणी–संघ को सलाह और सबसे बढ़कर रुपयों से मदद दी थी। वहाँ तो वे नाकामयाब रहे, लेकिन अब उनकी शक्ति भीतर ही भीतर खेतिहर–मजदूर दल को खड़ा करने में लग रही है। जमींदारों ने इसके लिए कुछ रुपया खर्च किया और अभी वे खर्च करेंगे। अभी इसी वक्त खेतिहर–मजदूर दल की दो पार्टियाँ बन चुकी हैं। मेरा तो उस दिन माथा ठनका था जब मैंने देखा कि जमींदारों से रुपया लेकर चुनाव में उन्हें वोट दिलाने के लिए निकले हुए दो सज्जन अब खेतिहर मजदूर दल का झण्डा उठा रहे हैं। मैं यह नहीं कहता कि खेतिहर–मजदूर को कष्ट नहीं है, उनकी शिकायतें झूठी हैं, उनको अपमान का जीवन नहीं बिताना पड़ रहा है, लेकिन हमें देखना होगा कि हमारे कार्य में सफलता कैसे मिलेगी? जमींदार किसानों के ही स्वार्थ के विरोधी नहीं हैं, खेतिहर–मजदूरों के लिए भी वे वैसे ही हैं। खेतिहर–मजदूर अगर मजदूर रहना चाहते हैं तो उनकी वेतन–वृद्धि तभी सम्भव है जब किसानों की आमदनी बढ़े। यदि वे किसान बनना चाहते हैं तो देखना होगा कि उनके लिए जमीन कहाँ से आयेगी? जिन किसानों के पास स्वयं दो बीघे, चार बीघे जमीन है, निश्चय ही वह उनके लिए भी पर्याप्त नहीं, फिर वे खेतिहर–मजदूरों को क्या देंगे? मैं तो समझता हूँ, किसानों की भी आर्थिक अवस्था सिर्फ जमींदारी हटा देने से पूरी तौर पर नहीं सुधर जायेगी। उसके लिए तो खेती में भी नये तरीके, छोटी–छोटी मशीनें और रासायनिक खाद का प्रयोग करना होगा। खेतिहर–मजदूरों के लिए यदि वे खेतिहर या किसान बनना चाहते हैं तो उपाय

सिर्फ एक ही है कि अब से जितना बकाश्त या जिरात की जमीन जमींदारों से निकले और जितनी खेती के लायक पड़ी हुई जमीन (पर्ती व जंगल) प्रान्त के किसी जिले में – पलामू, राँची, हजारीबाग आदि में मिले तो उसे खेतिहर–मजदूरों के लिए रिजर्व कर दी जाये। मैं समझता हूँ, वे लोग बड़ी भारी गलती करेंगे यदि तत्काल जो कुछ हो सकता है, उसे छोड़कर वे किसानों से झगड़ा मोल लेने जायेंगे।

बिहार में खेतिहर–मजदूर का जो आन्दोलन चला है, उसके प्रवर्तकों में कुछ 'हरिजनों' के नेता भी शामिल हैं। उन भाइयों से मेरा विनम्र निवेदन है कि खेतिहर–मजदूर के नाम से अपना संगठन करके, हरिजन भाई लोग (मैं इस शब्द से बहुत घृणा करता हूँ लेकिन अपने अर्थ को स्पष्ट करने के लिए इसका इस्तेमाल कर रहा हूँ) गलती कर रहे हैं। उनको सीधा–शुद्ध अपना एक संगठन रखना चाहिए, क्योंकि उनकी समस्याएँ इतनी विकट हैं और सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों में फैली हुई हैं कि यदि वे खेतिहर–मजदूर के नाम पर छूत–अछूत सबको जमा करने लगेंगे तो वे हवा हो जायेंगे। जहाँ कहीं कुछ भी पर्ती बकाश्त, जिरात या जंगल की जमीन मिलेगी, वह सभी खेतिहर–मजदूरों के लिए यदि दे दी जायेगी तो नतीजा यह होगा कि छूत जाति वाले, जिनकी पहुँच आसानी से अधिकारियों तक हो सकती है, उन जगहों को ले लेंगे और हरिजन के पल्ले बहुत कम पड़ेगा। छूत जाति के खेतिहर–मजदूरों की अवस्था उतनी हीन और अन्यायपूर्ण नहीं है, जैसे कि अछूत कही जाने वाली जातियों की। छूत जाति वाले पान की दुकान खोल सकते हैं, हलवाई भी बन सकते हैं, होटल भी चला सकते हैं और पचास तरह के और काम कर सकते हैं। प्राइवेट नौकरियों में भी उनको आसानी है, लेकिन वही बात अछूत कही जाने वाली जातियों के लिए नहीं कही जा सकती। सामाजिक अत्याचार जो अछूत कही जाने वाली जातियों पर हो रहा है, उसके कारण उनकी आर्थिक उन्नति के सभी मार्ग बन्द हैं, उनकी सारी शक्ति चाहिए तो थी कि इस ओर लगती जिससे वे अपने को शिक्षा और आर्थिक उन्नति के दूसरे साधनों को प्राप्त कर, अपनी अवस्था को कुछ बेहतर बनाते और साथ ही रास्ते में पड़ने वाली रुकावटों को दूर करते। ऐसे समय में किसानों के अत्याचारों को लेकर झगड़ा पैदा करने में अपनी ही शक्ति निर्बल होगी।

खेतिहर–मजदूरों को खयाल करना चाहिए कि उनकी आर्थिक मुक्ति साम्यवाद ही से हो सकती है और जो क्रान्ति आज शुरू हुई है, वह साम्यवाद पर ही ले जाकर रहेगी। उसके सिवा भले दिनों को दिखलाने वाला कोई दूसरा रास्ता नहीं है। सारन और मुजफ्फरपुर जैसे जिलों में आदमी पीछे छह–छह, सात–सात कट्ठा खेत पड़ता है। भला, वहाँ इतने से कहाँ इंसान की जिन्दगी बसर की जा सकती है? जरा–जरा से

चार–चार कट्ठे के खेतों में वैज्ञानिक खेती सम्भव ही कहाँ है? हमारी समस्याएँ तो तभी हल होंगी जब जमींदारी हटा दी जाये, खेतों पर भी किसी व्यक्ति का अधिकार न होकर राष्ट्र का अधिकार हो। गाँव के सभी खेतों की मेड़ें हटाकर एक खेत बना दिया जाये और ट्रैक्टर के जरिये खेत जोते जायें, लोग मिलकर सामूहिक खेती करें और उस खेती में नये आविष्कारों तथा कृषि–उपयोगी साधनों को बरता जाये। तभी जाकर हम एक बीघे में जापान की तरह सात सौ, आठ सौ रुपया की चीज पैदा कर सकेंगे और तभी जाकर यदि एक–दो जिले में सूखा पड़ जाये या बाढ़ आ जाये, तब भी दूसरे जिले की पैदावार से लोगों को भूखा नहीं मरना पड़ेगा। सूखा और बाढ़ ऐसी चीज नहीं है कि जिससे लोग गृहहीन हो जायें और अन्न बिना भूखे मरने लगें। बिहार में तीन करोड़ आदमी बसते हैं। इनमें दो करोड़ तो अवश्य मेहनत का काम कर सकते हैं। इतने हाथ यदि मकान और गाँव बसाने के काम के लिए एक महीने के लिए लग जायें तो क्या अपने घरों को ऊँची जगह बनाकर नहीं रह सकते हैं? मनुष्य का परिश्रम ही तो सब चीज बनाता है, बाकी साधन तो हमारे प्रदेश में सभी मौजूद हैं। और खेती से तो, इस गये–बीते तरीके से करने पर भी, इतना अनाज हमारे यहाँ पैदा हो रहा है जिसे बिहार वाले एक वर्ष से ज्यादा दिन तक खा सकते हैं। एक जगह के लोगों को अनाज बेचने और बाहर निकालने की कठिनाई पड़ रही है और दूसरी जगह लोग भूखों मर रहे हैं। हालाँकि दूसरी जगह लोग अपने परिश्रम को देने के लिए तैयार हैं, फिर क्या वजह है कि एक जगह के आदमी भूखों मरें। साम्यवाद ही हमें बतलायेगा कि हमें दो चार–व्यक्ति के घर नहीं रखने हैं, हमें सारे तीनों करोड़ व्यक्तियों का एक घर बनाना पड़ेगा और फिर सारे हाथों और दिमागों को उस परिवार की जीविका, भरण–पोषण तथा शिक्षा और सांस्कृतिक उन्नति के लिए लग जाना पड़ेगा।

क्रान्ति के मार्ग में हमें लोगों को किसी तरह का रोड़ा नहीं अटकाना चाहिए और खेतिहर–किसानों को तो यदि कोई आशा है तो क्रान्ति के पूर्णतया सफल होने ही में। उनको यह खयाल रखना चाहिए कि जो साम्यवादी आज किसानों को संगठित कर रहे हैं, उन्हें अपने अधिकारों पर डट जाने के लिए तैयार कर रहे हैं, वे अच्छी तरह जानते हैं कि सिर्फ जमींदारी को हटा देने से काम नहीं चलेगा – आगे चलकर हमें खेती पर भी व्यक्तिगत अधिकार अस्वीकार करना पड़ेगा – अर्थात किसान, खेतिहर–मजदूर सभी उस खेत के मालिक होंगे। सिर्फ खेती से ही तो सारा काम नहीं चल सकेगा, हमें देश में कारखानों और मिलों का प्रसार करना पड़ेगा और तब कहीं हमारी आर्थिक दरिद्रता दूर होगी। क्रान्ति को आगे बढ़ने दो, बस यही खेतिहर–मजदूरों का ध्येय होना चाहिए।

* * *

10

रूस में ढाई मास

'मैं कुल साढ़े चार मास स्वदेश से बाहर रहा' – डेढ़ मास रूस जाते समय ईरान में, दो सप्ताह आते समय अफगानिस्तान में, ढाई मास सोवियत रूस में। गया था दर्रा बोलन से, आया खैबर के दर्रे से। हिन्दुस्तान और रूस की सीमा के भीतर तो रेलवे ट्रेनें मिलीं, ईरान और अफगनिस्तान की सैर मोटर द्वारा हुई, कैस्पियन समुद्र जहाज से। 12 नवम्बर को सोवियत–सीमा में प्रवेश किया, 26 जनवरी को वहाँ से प्रस्थान। इस प्रकार रूस के जाड़े के अनुभव का मौका मिला। सिवाय काकेशश और मध्य–एशिया के कुछ भाग के, सभी जगह की भूमि बर्फ से आच्छादित थी। खेत आदि की जुताई सिर्फ उन्हीं भू–भागों में देखी।

सोवियत रूस के बारे में भ्रम तो अभी बहुत समय तक फैलता रहेगा। सारी दुनिया के अखबारों के गला फाड़–फाड़कर असफलता की पुकार करने पर भी संसार में साम्यवाद का प्रभाव इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि यदि पूँजीवादी जगत सोवियत देश में साम्यवाद की सफलता का प्रचार करने लगे, तो फिर उसकी क्या गति होगी? सोवियत–सीमा से दूर के देशों की बात छोड़ दीजिये। वक्षु (आमू) नदी सोवियत और अफगानिस्तान की सीमा है। मैंने अफगानिस्तान के भीतर के लोगों को बड़ी गम्भीरता से कहते सुना – "रूसी किसानों के भीतर रोटी का अकाल है।" उनको यह भी नहीं मालूम कि बीसवीं शताब्दी में रूस में सबसे अच्छी फसल 1913 में हुई थी। रूस में 1937 में गेहूँ की फसल 1913 से ठीक दुगुनी हुई। 1930–31 में धनी किसानों की स्वार्थपरता और प्रचार के कारण खेत कम बोये गये थे, मवेशी मार डाले गये थे, इसलिए रोटी का अकाल–सा पड़ गया था। उस वक्त कुछ 'कुलक' सोवियत–सीमा से भागकर अफगानिस्तान में भी चले गये थे। 1930–31 की आर्थिक अवस्था से अब जमीन–आसमान का अन्तर है, तो भी इस पार के अफगानों के लिए अभी तक सोवियत–राष्ट्र के लिए 'रोटी का अकाल' चला ही जा रहा है।

लोगों की आर्थिक अवस्था, शिक्षा और संस्कृति का धरातल हर साल, क्या

हर महीने ऊँचा होता जा रहा है। हर साल पाँच, दस और पन्द्रह फीसदी तक वेतन बढ़ाया जा रहा है और दूसरी ओर जैसे-जैसे चीजों की उपज फैक्टरियों की वृद्धि और कार्यकर्त्ताओं की कार्य-कुशलता के अनुसार बढ़ती जा रही है, वैसे ही वैसे चीजों का दाम घटाया जा रहा है। वेतन देना और चीजों का बेचना सरकार के हाथ में है।

पिछले दो वर्षों में खाने-पीने की कितनी ही चीजों की कीमत में पच्चीस-पच्चीस, तीस-तीस फीसदी कमी की गयी है। मेरे वहाँ रहते अस्पताल की दाइयों की तनख्वाहों में 15 फीसदी की वृद्धि की गयी। इस प्रकार वेतन-वृद्धि और चीजों के मूल्य घटाने से एक ओर लोग जीवन की सुख-सामग्री को अधिक पा रहे हैं, दूसरी ओर वहाँ 5-6 वर्षों से बेकारी एकदम उठ गयी है। स्वस्थ रहने पर आदमी के लिए काम हाजिर है। बीमारी या किसी और कारण से काम करने के अयोग्य होने का सारा भार सरकार अपने ऊपर लेती है। इस प्रकार मनुष्य को 'कल की चिन्ता' बिल्कुल नहीं है। इसमें शक नहीं कि इंग्लैण्ड और अमेरिका के मजदूर रूस के बहुत से मजदूरों से इस वक्त अधिक वेतन पाते हैं, लेकिन जहाँ उन देशों के मजदूरों के सर पर हमेशा बेकारी की नंगी तलवार लटकती रहती है, वहाँ सोवियत-श्रमजीवी 'कल के लिए' बिल्कुल निश्चिन्त हैं। साथ ही उनका वेतन भी दिन पर दिन आगे की ही ओर बढ़ रहा है।

जिस नये सोवियत-विधान के अनुसार 12 दिसम्बर को महासोवियत के 1143 सभासदों (Deputies) का चुनाव हुआ है, उसके महत्त्व को कम करने के लिए पूँजीवादी देशों ने बड़ी कोशिश की और अब भी कर रहे हैं। कोई कहता है – 'चुनाव क्या है, धोखे की टट्टी है।' कोई कहता है – 'स्तालिन और कम्युनिस्ट पार्टी ने लोगों को धमकाकर अपने लिए वोट लिया है।' नया विधान कहाँ तक प्रजासत्तात्मक है और कहाँ तक लोगों को वोट देने की स्वतन्त्रता उसमें है, यह निम्न बातों से मालूम हो जायेगा –

(1) 12 दिसम्बर, 1937 से पहले पुराने जमींदारों, पूँजीपतियों, पुरोहितों, कुलकों (धनी किसान) और क्रान्ति-विरोधियों की सन्तानों को वोट देने या उम्मीदवार होने का अधिकार नहीं था। नये विधान ने 18 वर्ष से ऊपर की अवस्था के सभी स्त्री-पुरुषों को वोट का अधिकार दे दिया। धन, विद्या आदि की योग्यता का इसमें कोई खयाल नहीं है।

(2) वोट का पर्चा और लिफाफा हर एक आदमी को गुप्त रूप से निशान करके डालने के लिए मिलता है। वोट देने का ढंग ऐसा रखा गया है कि वोटर ने किसको वोट दिया, सिर्फ वही जान सकता है।

(3) जिसे 51 फीसदी वोट नहीं मिले, वह सभासद नहीं चुना जाता।

(4) नामजद करने का अधिकार ट्रेड यूनियन आदि संस्थाओं अथवा किसी भी सार्वजनिक सभा को दिया गया है। चूँकि सोवियत का कोई व्यक्ति ऐसी सम्पत्ति नहीं रखता जिसकी सहायता से वह चुनाव का प्रचार कर सके, या बड़ी-बड़ी सभाएँ संगठित कर सके। चुनाव के प्रचार का सारा खर्च व्यक्ति के ऊपर न होकर संस्थाओं के ऊपर पड़ता है, इसीलिए नामजद करना भी उन्हीं के हाथ में दिया गया है।

सोवियत चुनाव के नियमों में कोई ऐसी बात नहीं है कि जिससे एक चुनाव-क्षेत्र में दूसरा प्रतिद्वन्द्वी उम्मीदवार न खड़ा किया जा सके। लेकिन कम्युनिस्ट-पार्टी अपनी सेवाओं से वहाँ इतनी सर्वप्रिया पार्टी है कि मुकाबिलों में पराजय का निश्चय समझ सामने आ ही कौन सकता है? केन्द्रीय कौंसिल के कुछ पुनर्निर्वाचनों में भारतीय कांग्रेस के उम्मीदवारों के सामने कोई उम्मीदवार जैसे खड़ा नहीं हुआ, वैसे ही वहाँ भी प्रतिद्वन्द्वी को खड़ा होने की हिम्मत नहीं होती।

सोवियत और स्तालिन के विरोध में हजारों झूठी बातों का प्रचार करना और साथ ही त्रोत्सकी की सेवाओं और योग्यता के लिए आसमान तक पुल बाँधना पूँजीवादी पत्रों का धर्म-सा हो गया है। त्रोत्सकी की प्रशंसा और साम्यवाद में उसकी निष्ठा को तो ऐसे शब्दों में चित्रित किया जाता है कि मालूम होता है मानो ये पूँजीवादी पत्रकार संसार में साम्यवाद लाने के लिए लालायित-से हो रहे हैं। सोवियत साम्यवाद की सफलता का धरती पर एक ठोस साकार रूप है, इसलिए वे उसको लोगों की आँखों से ओझल रखना चाहते हैं। उसकी जगह पर उसके विरोधियों और उनके विरोधी मनोभावों को वे लोगों के सामने लाना चाहते हैं। सोवियत शासन और उसका प्रधान नेता स्तालिन कितना सर्वप्रिय है, यह इसी से मालूम हो सकता है कि पिछले चुनाव में 12 दिसम्बर की-सी सर्दी और धरती के षष्ठांश तक विस्तृत देश में कष्ट उठाकर साढ़े 96 फीसदी वोटरों ने अपना वोट दिया था। पिछले दस वर्षों में अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों में निर्वाचन हुए हैं, लेकिन कहीं पर 83 फीसदी से अधिक लोग निर्वाचन-स्थान पर नहीं पहुँचे। स्तालिन के निर्वाचन-क्षेत्र के वोटरों में से तो एक भी उस दिन अनुपस्थित नहीं रहा।

स्तालिन की बात को वहाँ शिरोधार्य मानते हैं। कार्ल मार्क्स साम्यवाद के तत्त्व का द्रष्टा था, उसने सच्चाई को ऐतिहासिक प्रमाणों, आर्थिक कठिनाइयों और वैज्ञानिक युक्तियों से प्रमाणित कर संसार के श्रमजीवियों के सामने रखा। कितनों के दिमाग ने इस सच्चाई को स्वीकार कर लिया, लेकिन पूँजीवादियों के स्वार्थ और उनकी रक्षा के बड़े-बड़े साधन उस सिद्धान्त के धरती पर आने के रास्ते में बाधक थे। लेनिन की विशेषता थी एक सफल साम्यवादी क्रान्ति को भूतल पर

लाना, जिसमें कितनी ही बार उसे पूर्ण असफलता ही मिली थी। खैर, साम्यवादी क्रान्ति जार के साम्राज्य में हो गयी। देशी और विदेशी पूँजीवादियों ने उसे हर तरह दबाने की कोशिश की और वह उसमें विफल हुए, लेकिन तो भी लेनिन के समय उपज के सभी साधनों में से बहुत कम व्यक्तियों के हाथ से निकलकर समाज के हाथ में आये थे। खेती ही नहीं, वाणिज्य–व्यवसाय भी बहुत कुछ व्यक्तियों के हाथ में था जब कि 1924 ई० के आरम्भ में लेनिन का देहान्त हुआ। शहर से लेकर गाँव तक की जनता को साम्यवादी समाज के रूप में परिणत करना स्तालिन का काम था। यह मार्क्स और लेनिन के काम से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। जिस वक्त लेनिन की मृत्यु के बाद कल–कारखानों को बढ़ाकर देश के उद्योगीकरण का कार्यक्रम स्तालिन ने सामने रखा, तो एक तरफ बुखारिन आदि नरम–दली कहते थे कि जल्दी हो रही है, इसमें सफलता नहीं होगी, देश को भारी नुकसान पहुँचेगा। दूसरी ओर त्रोत्सकी जैसे गरम–दली कहते थे कि बिना सारे संसार में क्रान्ति हुए साम्यवाद एक मुल्क में स्थापित नहीं हो सकता। इसलिए हमें अपनी सारी शक्ति रूस को ही साम्यवादी और उद्योगपूर्ण बनाने में न लगाकर अन्तरराष्ट्रीय क्रान्ति की ओर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। स्तालिन ने इन विरोधों के बावजूद अपने प्रोग्राम को लोगों के सामने रखा और उसे उसमें सफलता हुई। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय भी दाहिने–बायें पार्टी वाले इसी तरह विरोध करते रहे, लेकिन, सोवियत जनता ने अपनी आँखों से इन योजनाओं द्वारा आशातीत आर्थिक सफलता देखी। स्तालिन के नेतृत्व में रूस के नष्टप्राय उद्योग–धन्धे 1927 तक महायुद्ध के पहले की अवस्था से आगे बढ़ गये और प्रथम और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं की समाप्ति के बाद तो सोवियत–प्रजातन्त्र यूरोप का सबसे बड़ा उद्योग–धन्धा–परायण देश हो गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना द्वारा सोवियत प्रजातन्त्र चाहता है कि अमेरिका को भी मात कर उद्योग–धन्धे में वह संसार में प्रथम स्थान ग्रहण कर ले। इन पंचवर्षीय योजनाओं का आरम्भिक वर्षों में लोग मजाक उड़ाया करते थे और अब सफलता के बाद हर देश उनका अनुसरण करना चाहता है। इन योजनाओं द्वारा सोवियत जनता ने अपने भूख और बेकारी के दिनों की जगह पर सुख–समृद्धि के दिन देखे, अविद्या और निरक्षरता की जगह ज्ञान और कला का प्रचार सार्वजनिक होते देखा। अभी दस वर्ष पहले उनकी कैसी हीन दशा थी, यह बहुतेरे सोवियत नागरिकों को भली प्रकार मालूम है। स्तालिन की योजनाओं की यही सफलताएँ हैं जिन्होंने उसे इतना लोकप्रिय बना दिया है। कुछ लोगों के लिए इस लोकप्रियता को समझना मुश्किल है। वह समझते हैं कि महज एक आदमी, जो न ईश्वर की तरफ से भेजा गया है, और जिसमें न वैसे दैवी चमत्कार हैं, भला कैसे इतना जनप्रिय हो सकता है।

जब-तब कितने ही षड्यन्त्रकारियों को सोवियत सरकार ने जो दण्ड दिये हैं, उसे बढ़ा-चढ़ाकर पूँजीवादी पत्रों ने इस प्रकार संसार में फैलाया है कि कितने ही लोग समझते हैं कि सोवियत शासन की नींव बहुत कमजोर है, हिंसा और आतंकवाद के सहारे उनका शासन चल रहा है। वोरोशिलोफ, मोलोतोफ, बुदयन्मी ब्लूचर, आदि जैसे क्रान्ति के महानायकों को अब भी वैसी ही लगन से काम करते देखते हुए भी जहाँ दो-चार पुराने क्रान्तिकारियों में से अपने अपराध के लिए दण्डित हुए पूँजीवादी पत्रों ने हल्ला करना शुरू कर दिया कि 'लेनिन' के साथी सभी क्रान्तिकारी स्तालिन के षड्यन्त्र के शिकार हो चुके। सजा पाये लोगों की ओर दृष्टि डालने से मालूम होगा कि उनमें सभी ऐसे बुद्धिजीवी व्यक्ति हैं जिन्हें अपनी महत्त्वाकांक्षाओं में नाउम्मीद होने के कारण सफल पार्टी और उसके नेताओं के प्रति विद्वेष पैदा हो गया है। शिक्षित बुद्धिजीवी वर्ग चाहे वैसे कितना ही उदार और त्यागी हो, लेकिन उससे स्वार्थ और महत्त्वाकांक्षा को धक्का लगते ही वह इतना नीचे उतर आता है जितना नीचे अशिक्षित साधारण जन उतरने की हिम्मत नहीं रख सकते। सोवियत प्रजातन्त्र में उद्योग-धन्धे बहुत ज्यादा केन्द्रित हो गये हैं और उनमें यन्त्रों का अत्यधिक प्रयोग हुआ, इसलिए एक व्यक्ति असन्तुष्ट होने पर ज्यादा नुकसान कर सकता है।

एक यन्त्र-विशेष को खराब कर वह दो सप्ताह दस कर्मचारियों को बेकार बैठा सकता है। रेल की सूचनाओं में गड़बड़ी कर ट्रेनों को लड़ा सकता है, गहरी खानों की पम्पों को खराब कर उनमें पानी भरवा सकता है। जिन लोगों को हाल में सोवियत सरकार ने कड़ी-कड़ी सजाएँ दी हैं, उन्होंने यही अपराध किये थे। उनके पीछे जनता की कोई सहानुभूति नहीं, वस्तुतः वे जेलों में पकड़कर बन्द न किये गये होते, तो लोग क्रोधान्ध हो उन्हें अमेरिका के गोरों की तरह 'लेविन' से मार डालते। ऐसे लोगों को सोवियत-शासन और स्तालिन के जुल्म का 'शहीद' उद्घोषित करना विदेशी पूँजीवादियों के अपने मतलब की बात है और इस प्रकार सच का झूठ करना तभी तक होता रहेगा जब तक कि सोवियत-शक्ति एक भारी युद्ध में अपनी सबलता को सिद्ध नहीं कर देती और क्या जाने, इसके बाद भी, जब तक कि भूमण्डल पर पूँजीवाद का अस्तित्व है, ऐसे झूठे प्रचार भी कभी बन्द होंगे?

• • •

हमें अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक-एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार रहना चाहिए। बाहरी क्रान्ति से कहीं ज्यादा जरूरत मानसिक क्रान्ति की है। हमें आगे-पीछे-दाहिने-बायें दोनों हाथों से नंगी तलवारें नचाते हुए अपनी सभी रूढ़ियों को काटकर आगे बढ़ना होगा।

– राहुल सांकृत्यायन

राहुल
फ़ाउण्डेशन

ISBN 978-81-87728-69-6
ISBN 818772869-8
9788187728696
मूल्य : रु. 40.00

बेहतर ज़िन्दगी का रास्ता
बेहतर किताबों से होकर जाता है!

जनचेतना

सम्पूर्ण सूचीपत्र
2018

हम हैं सपनों के हरकारे
हम हैं विचारों के डाकिये

आम लोगों के लिए
ज़रूरी हैं वे किताबें
जो उनकी ज़िन्दगी की घुटन
और मुक्ति के स्वप्नों तक
पहुँचाती हैं विचार
जैसे कि बारूद की ढेरी तक
आग की चिनगारी।
घर–घर तक चिनगारी छिटकाने वाला
तेज़ हवा का झोंका बन जाना होगा
ज़िन्दगी और आने वाले दिनों का सच
बतलाने वाली किताबों को
जन–जन तक पहुँचाना होगा।

दो दशक पहले प्रगतिशील, जनपक्षधर साहित्य को जन–जन तक पहुँचाने की मुहिम की एक छोटी–सी शुरुआत हुई, बड़े मंसूबे के साथ। एक छोटी–सी दुकान और फ़ुटपाथों पर, मुहल्लों में और दफ़्तरों के सामने छोटी–छोटी प्रदर्शनियाँ लगाने वाले तथा साइकिलों पर, ठेलों पर, झोलों में भरकर घर–घर किताबें पहुँचाने वाले समर्पित अवैतनिक वालण्टियरों की टीम – शुरुआत बस यहीं से हुई। आज यह वैचारिक अभियान उत्तर भारत के दर्जनों शहरों और गाँवों तक फैल चुका है। एक बड़े और एक छोटे प्रदर्शनी वाहन के माध्यम से जनचेतना हिन्दी और पंजाबी क्षेत्र के सुदूर कोनों तक हिन्दी, पंजाबी और अंग्रेज़ी साहित्य एवं कला–सामग्री के साथ सपने और विचार लेकर जा रही है, जीवन–संघर्ष–सृजन–प्रगति का नारा लेकर जा रही है।

हिन्दी क्षेत्र में यह अपने ढंग का एक अनूठा प्रयास है। एक भी वैतनिक स्टाफ़ के बिना, समर्पित वालण्टियरों और विभिन्न सहयोगी जनसंगठनों के कार्यकर्ताओं के बूते पर यह प्रोजेक्ट आगे बढ़ रहा है।

आइये, आप सभी इस मुहिम में हमारे सहयात्री बनिये।

सम्पूर्ण सूचीपत्र

परिकल्पना प्रकाशन

उपन्यास

1.	**तरुणाई का तराना**/याङ मो		...
2.	**तीन टके का उपन्यास**/बेर्टोल्ट ब्रेष्ट		...
3.	**माँ**/मक्सिम गोर्की		...
4.	**वे तीन**/मक्सिम गोर्की		75.00
5.	**मेरा बचपन**/मक्सिम गोर्की		...
6.	**जीवन की राहों पर**/मक्सिम गोर्की		...
7.	**मेरे विश्वविद्यालय**/मक्सिम गोर्की		...
8.	**फ़ोमा गोर्देयेव**/मक्सिम गोर्की		55.00
9.	**अभागा**/मक्सिम गोर्की		40.00
10.	**बेकरी का मालिक**/मक्सिम गोर्की		25.00
11.	**असली इन्सान**/बोरिस पोलेवोई		...
12.	**तरुण गार्ड**/अलेक्सान्द्र फ़देयेव	(दो खण्डों में)	160.00
13.	**गोदान**/प्रेमचन्द		...
14.	**निर्मला**/प्रेमचन्द		...
15.	**पथ के दावेदार**/शरत्चन्द्र		...
16.	**चरित्रहीन**/शरत्चन्द्र		...
17.	**गृहदाह**/शरत्चन्द्र		70.00
18.	**शेषप्रश्न**/शरत्चन्द्र		...
19.	**इन्द्रधनुष**/वान्दा वैसील्युस्का		65.00
20.	**इकतालीसवाँ**/बोरीस लव्रेन्योव		20.00
21.	**दास्तान चलती है** (एक नौजवान की डायरी से)/अनातोली कुज़्नेत्सोव		70.00

22. **वे सदा युवा रहेंगे**/ग्रीगोरी बकलानोव 60.00
23. **मुर्दों को क्या लाज-शर्म**/ग्रीगोरी बकलानोव 40.00
24. **बख़्तरबन्द रेल 14-69**/व्सेवोलोद इवानोव 30.00
25. **अश्वसेना**/इसाक बाबेल 40.00
26. **लाल झण्डे के नीचे**/लाओ श 50.00
27. **रिक्शावाला**/लाओ श 65.00
28. **चिरस्मरणीय** (प्रसिद्ध कन्नड़ उपन्यास)/निरंजन 55.00
29. **एक तयशुदा मौत** (एनजीओ की पृष्ठभूमि पर)/मोहित राय 30.00
30. **Mother/***Maxim Gorky* 250.00
31. **The Song of Youth**/*Yang Mo* ...

कहानियाँ

1. **श्रेष्ठ सोवियत कहानियाँ** (3 खण्डों का सेट) 450.00
2. **वह शख़्स जिसने हैडलेबर्ग को भ्रष्ट कर दिया**
(मार्क ट्वेन की दो कहानियाँ) 60.00

मक्सिम गोर्की

3. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 1) ...
4. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 2) ...
5. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 3) ...
6. **हिम्मत न हारना मेरे बच्चो** 10.00
7. **कामो : एक जाँबाज़ इन्क़लाबी मज़दूर की कहानी** ...

अन्तोन चेख़व

8. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 1) ...
9. **चुनी हुई कहानियाँ** (खण्ड 2) ...
10. **दो अमर कहानियाँ**/लू शुन ...
11. **श्रेष्ठ कहानियाँ**/प्रेमचन्द 80.00
12. **पाँच कहानियाँ**/पुश्किन ...
13. **तीन कहानियाँ**/गोगोल 30.00
14. **तूफ़ान**/अलेक्सान्द्र सेराफ़ीमोविच 60.00
15. **वसन्त**/सेर्गेई अन्तोनोव 60.00
16. **वसन्तागम**/रओ शि 50.00

17. **सूरज का ख़ज़ाना**/मिख़ाईल प्रीश्विन 40.00
18. **स्नेगोवेत्स का होटल**/मत्वेई तेवेल्योव 35.00
19. **वसन्त के रेशम के कीड़े**/माओ तुन 50.00
20. **क्रान्ति झंझा की अनुगूँजें** (अक्टूबर क्रान्ति की कहानियाँ) 75.00
21. **चुनी हुई कहानियाँ**/श्याओ हुङ 50.00
22. **समय के पंख**/कोन्स्तान्तीन पाउस्तोव्सकी ...
23. **श्रेष्ठ रूसी कहानियाँ** (संकलन) ...
24. **अनजान फूल**/आन्द्रेई प्लातोनोव 40.00
25. **कुत्ते का दिल**/मिख़ाईल बुल्गाकोव 70.00
26. **दोन की कहानियाँ**/मिख़ाईल शोलोख़ोव 35.00
27. **अब इन्साफ़ होने वाला है** ...
(भारत और पाकिस्तान की प्रगतिशील उर्दू कहानियों का प्रतिनिधि संकलन)
(ग्यारह नयी कहानियों सहित परिवर्द्धित संस्करण)/स. **शकील सिद्दीक़ी**
28. **लाल कुरता**/हरिशंकर श्रीवास्तव ...
29. **चम्पा और अन्य कहानियाँ**/मदन मोहन 35.00

कविताएँ

1. **जब मैं जड़ों के बीच रहता हूँ**/पाब्लो नेरूदा 60.00
2. **आँखें दुनिया की तरफ़ देखती हैं**/लैंग्स्टन ह्यूज 60.00
3. **उम्मीद-ए-सहर की बात सुनो** (फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ के संस्मरण और चुनिन्दा शायरी, सम्पादक: शकील सिद्दीक़ी) 160.00
4. **माओ त्से-तुङ की कविताएँ** (राजनीतिक पृष्ठभूमि सहित विस्तृत टिप्पणियाँ एवं अनुवाद : सत्यव्रत) 20.00
5. **इकहत्तर कविताएँ और तीस छोटी कहानियाँ – बेर्टोल्ट ब्रेष्ट**
(मूल जर्मन से अनुवाद : मोहन थपलियाल)
(ब्रेष्ट के दुर्लभ चित्रों और स्केचों से सज्जित) 150.00
6. **समर तो शेष है...** (इप्टा के दौर से आज तक के प्रतिनिधि क्रान्तिकारी समूहगीतों का संकलन) 65.00
7. **मध्यवर्ग का शोकगीत**/हान्स माग्नुस एन्त्सेन्सबर्गर 30.00
8. **जेल डायरी**/हो ची मिन्ह 40.00
9. **ओस की बूँदें और लाल गुलाब**/होसे मारिया सिसों 25.00

10. **इन्तिफ़ादा :** फ़लस्तीनी कविताएँ/स. रामकृष्ण पाण्डेय ...

11. **लहू है कि तब भी गाता है**/पाश ...

12. **लोहू और इस्पात से फूटता गुलाब :** फ़लस्तीनी कविताएँ (द्विभाषी संकलन)
A Rose Breaking Out of Steel and Blood (Palestinian Poems) 60.00

13. **पाठान्तर**/विष्णु खरे 50.00

14. **लालटेन जलाना** (चुनी हुई कविताएँ)/विष्णु खरे 60.00

15. **ईश्वर को मोक्ष**/नीलाभ 60.00

16. **बहनें और अन्य कविताएँ**/असद ज़ैदी 50.00

17. **सामान की तलाश**/असद ज़ैदी 50.00

18. **कोहेकाफ़ पर संगीत-साधना**/शशिप्रकाश 50.00

19. **पतझड़ का स्थापत्य**/शशिप्रकाश 75.00

20. **सात भाइयों के बीच चम्पा**/कात्यायनी (पेपरबैक) ...
(हार्डबाउंड) 125.00

21. **इस पौरुषपूर्ण समय में**/कात्यायनी 60.00

22. **जादू नहीं कविता**/कात्यायनी (पेपरबैक) ...
(हार्डबाउंड) 200.00

23. **फ़ुटपाथ पर कुर्सी**/कात्यायनी 80.00

24. **राख-अँधेरे की बारिश में**/कात्यायनी 15.00

25. **यह मुखौटा किसका है**/विमल कुमार 50.00

26. **यह जो वक्त है**/कपिलेश भोज 60.00

27. **देश एक राग है**/भगवत रावत ...

28. **बहुत नर्म चादर थी जल से बुनी**/नरेश चन्द्रकर 60.00

29. **दिन भौंहें चढ़ाता है**/मलय 120.00

30. **देखते न देखते**/मलय 65.00

31. **असम्भव की आँच**/मलय 100.00

32. **इच्छा की दूब**/मलय 90.00

33. **इस ढलान पर**/प्रमोद कुमार 90.00

34. **तो**/शैलेय 75.00

नाटक

1. **करवट**/मक्सिम गोर्की 40.00

2. **दुश्मन**/मक्सिम गोर्की 35.00

3. **तलछट**/मक्सिम गोर्की ...
4. **तीन बहनें** (दो नाटक)/अन्तोन चेख़व 45.00
5. **चेरी की बग़िया** (दो नाटक)/अ. चेख़व 45.00
6. **बलिदान जो व्यर्थ न गया**/व्सेवोलोद विश्नेव्स्की 30.00
7. **क्रेमलिन की घण्टियाँ**/निकोलाई पोगोदिन 30.00

संस्मरण

1. **लेव तोल्स्तोय : शब्द-चित्र**/मक्सिम गोर्की 20.00

स्त्री-विमर्श

1. **दुर्ग द्वार पर दस्तक** (स्त्री प्रश्न पर लेख)/कात्यायनी (पेपरबैक) 130.00

ज्वलन्त प्रश्न

1. **कुछ जीवन्त कुछ ज्वलन्त**/कात्यायनी 90.00
2. **षड्यन्त्ररत मृतात्माओं के बीच**
   (साम्प्रदायिकता पर लेख)/कात्यायनी 25.00
3. **इस रात्रि श्यामला बेला में** (लेख और टिप्पणियाँ)/सत्यव्रत 30.00

व्यंग्य

1. **कहें मनबहकी खरी-खरी**/मनबहकी लाल 25.00

नौजवानों के लिए विशेष

1. **जय जीवन!** (लेख, भाषण और पत्र)/निकोलाई ओस्त्रोव्स्की 50.00

वैचारिकी

1. **माओवादी अर्थशास्त्र और समाजवाद का भविष्य**/रेमण्ड लोट्टा 25.00

साहित्य-विमर्श

1. **उपन्यास और जनसमुदाय**/रैल्फ़ फ़ॉक्स 75.00
2. **लेखनकला और रचनाकौशल**/
   गोर्की, फ़ेदिन, मयाकोव्स्की, अ. तोल्सतोय ...
3. **दर्शन, साहित्य और आलोचना**/
   बेलिंस्की, हर्ज़न, चेर्नीशेव्स्की, दोब्रोल्युबोव 65.00
4. **सृजन-प्रक्रिया और शिल्प के बारे में**/मक्सिम गोर्की 40.00

5. **मार्क्सवाद और भाषाविज्ञान की समस्याएँ**/स्तालिन 20.00

नयी पीढ़ी के निर्माण के लिए

1. **एक पुस्तक माता-पिता के लिए**/अन्तोन मकारेंको ...
2. **मेरा हृदय बच्चों के लिए**/वसीली सुखोम्लीन्स्की ...

आह्वान पुस्तिका श्रृंखला

1. **प्रेम, परम्परा और विद्रोह**/कात्यायनी 50.00

सृजन परिप्रेक्ष्य पुस्तिका श्रृंखला

1. **एक नये सर्वहारा पुनर्जागरण और प्रबोधन के वैचारिक-सांस्कृतिक कार्यभार**/कात्यायनी, सत्यम 25.00

दो महत्वपूर्ण पत्रिकाएँ

दिशासन्धान

मार्क्सवादी सैद्धान्तिक शोध और विमर्श का मंच

सम्पादकः कात्यायनी / सत्यम

एक प्रति : 100 रुपये, आजीवनः 5000 रुपये
वार्षिक (4 अंक) : 400 रुपये (100 रु. रजि. बुकपोस्ट व्यय अतिरिक्त)

नान्दीपाठ

मीडिया, संस्कृति और समाज पर केन्द्रित

सम्पादकः कात्यायनी / सत्यम

एक प्रति : 40 रुपये आजीवनः 3000 रुपये
वार्षिक (4 अंक) : 160 रुपये (100 रु. रजि. बुक पोस्ट व्यय अतिरिक्त)

सम्पादकीय कार्यालय :
69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006
फोनः 9936650658, 8853093555
वेबसाइट : http://dishasandhaan.in ईमेलः dishasandhaan@gmail.com
वेबसाइट : http://naandipath.in ईमेलः naandipath@gmail.com

राहुल फाउण्डेशन

नौजवानों के लिए विशेष

1.	**नौजवानों से दो बातें**/पीटर क्रोपोटकिन	15.00
2.	**क्रान्तिकारी कार्यक्रम का मसविदा**/भगतसिंह	15.00
3.	**मैं नास्तिक क्यों हूँ और 'ड्रीमलैण्ड' की भूमिका**/भगतसिंह	15.00
4.	**बम का दर्शन और अदालत में बयान**/भगतसिंह	15.00
5.	**जाति-धर्म के झगड़े छोड़ो, सही लड़ाई से नाता जोड़ो**/भगतसिंह	15.00
6.	**भगतसिंह ने कहा...**(चुने हुए उद्धरण)/भगतसिंह	15.00

क्रान्तिकारियों के दस्तावेज़

1.	**भगतसिंह और उनके साथियों के सम्पूर्ण उपलब्ध दस्तावेज़**/स. सत्यम	350.00
2.	**शहीदेआज़म की जेल नोटबुक**/भगतसिंह	100.00
3.	**विचारों की सान पर**/भगतसिंह	50.00

क्रान्तिकारियों के विचारों और जीवन पर

1.	**बहरों को सुनाने के लिए**/एस. इरफ़ान हबीब (भगतसिंह और उनके साथियों की विचारधारा और कार्यक्रम)	...
2.	**क्रान्तिकारी आन्दोलन का वैचारिक विकास**/शिव वर्मा	15.00
3.	**भगतसिंह और उनके साथियों की विचारधारा और राजनीति**/बिपन चन्द्र	20.00
4.	**यश की धरोहर**/ भगवानदास माहौर, शिव वर्मा, सदाशिवराव मलकापुरकर	50.00
5.	**संस्मृतियाँ**/शिव वर्मा	80.00
6.	**शहीद सुखदेव : नौघरा से फाँसी तक**/स. डॉ. हरदीप सिंह	40.00

महत्त्वपूर्ण और विचारोत्तेजक संकलन

1. **उम्मीद एक ज़िन्दा शब्द है**
   ('दायित्वबोध' के महत्त्वपूर्ण सम्पादकीय लेखों का संकलन) 75.00
2. **एनजीओ : एक ख़तरनाक साम्राज्यवादी कुचक्र** 60.00
3. **डब्ल्यूएसएफ़ : साम्राज्यवाद का नया ट्रोजन हॉर्स** 50.00

ज्वलन्त प्रश्न

1. **'जाति' प्रश्न के समाधान के लिए बुद्ध काफ़ी नहीं, अम्बेडकर भी काफ़ी नहीं, मार्क्स ज़रूरी हैं** / रंगनायकम्मा ...
2. **जाति और वर्ग : एक मार्क्सवादी दृष्टिकोण** / रंगनायकम्मा 60.00

दायित्वबोध पुस्तिका शृंखला

1. **अनश्वर हैं सर्वहारा संघर्षों की अग्निशिखाएँ**/दीपायन बोस 10.00
2. **समाजवाद की समस्याएँ, पूँजीवादी पुनर्स्थापना और महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति**/शशिप्रकाश 30.00
3. **क्यों माओवाद?**/शशिप्रकाश 20.00
4. **बुर्जुआ वर्ग के ऊपर सर्वतोमुखी अधिनायकत्व लागू करने के बारे में**/चाङ चुन-चियाओ 5.00
5. **भारतीय कृषि में पूँजीवादी विकास**/सुखविन्दर 35.00

आह्वान पुस्तिका शृंखला

1. **छात्र-नौजवान नयी शुरुआत कहाँ से करें?** 15.00
2. **आरक्षण : पक्ष, विपक्ष और तीसरा पक्ष** 15.00
3. **आतंकवाद के बारे में : विभ्रम और यथार्थ** 15.00
4. **क्रान्तिकारी छात्र-युवा आन्दोलन** 15.00
5. **भ्रष्टाचार और उसके समाधान का सवाल सोचने के लिए कुछ मुद्दे** 50.00

बिगुल पुस्तिका शृंखला

1. **कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन और उसका ढाँचा**/लेनिन 10.00
2. **मकड़ा और मक्खी**/विल्हेल्म लीब्नेख़्त 5.00

3. **ट्रेडयूनियन काम के जनवादी तरीक़े**/सेर्गेई रोस्तोवस्की 5.00
4. **मई दिवस का इतिहास**/अलेक्ज़ैण्डर ट्रैक्टनबर्ग 10.00
5. **पेरिस कम्यून की अमर कहानी** 20.00
6. **अक्टूबर क्रान्ति की मशाल** 15.00
7. **जंगलनामा : एक राजनीतिक समीक्षा**/डॉ. दर्शन खेड़ी 5.00
8. **लाभकारी मूल्य, लागत मूल्य, मध्यम किसान और छोटे पैमाने के माल उत्पादन के बारे में मार्क्सवादी दृष्टिकोण : एक बहस** 30.00
9. **संशोधनवाद के बारे में** 10.00
10. **शिकागो के शहीद मज़दूर नेताओं की कहानी**/हावर्ड फ़ास्ट 10.00
11. **मज़दूर आन्दोलन में नयी शुरुआत के लिए** 20.00
12. **मज़दूर नायक, क्रान्तिकारी योद्धा** 15.00
13. **चोर, भ्रष्ट और विलासी नेताशाही** ...
14. **बोलते आँकड़े, चीख़ती सच्चाइयाँ** ...
15. **राजधानी के मेहनतकश : एक अध्ययन**/अभिनव 30.00
16. **फ़ासीवाद क्या है और इससे कैसे लड़ें?**/अभिनव 75.00
17. **नेपाली क्रान्ति : इतिहास, वर्तमान परिस्थिति और आगे के रास्ते से जुड़ी कुछ बातें, कुछ विचार**/आलोक रंजन 55.00
18. **कैसा है यह लोकतंत्र और यह संविधान किनकी सेवा करता है** आलोक रंजन/आनन्द सिंह 100.00

मार्क्सवाद

1. **धर्म के बारे में**/मार्क्स, एंगेल्स 100.00
2. **कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र**/मार्क्स-एंगेल्स 25.00
3. **साहित्य और कला**/मार्क्स-एंगेल्स 150.00
4. **फ़्रांस में वर्ग-संघर्ष**/कार्ल मार्क्स 40.00
5. **फ़्रांस में गृहयुद्ध**/कार्ल मार्क्स 20.00
6. **लूई बोनापार्त की अठारहवीं ब्रूमेर**/कार्ल मार्क्स 35.00
7. **उज़रती श्रम और पूँजी**/कार्ल मार्क्स 15.00
8. **मज़दूरी, दाम और मुनाफ़ा**/कार्ल मार्क्स 20.00
9. **गोथा कार्यक्रम की आलोचना**/कार्ल मार्क्स 40.00
10. **लुडविग फ़ायरबाख़ और क्लासिकीय जर्मन दर्शन का अन्त**/ फ़्रेडरिक एंगेल्स 20.00

11.	**जर्मनी में क्रान्ति तथा प्रतिक्रान्ति**/फ़्रेडरिक एंगेल्स	30.00
12.	**समाजवाद : काल्पनिक तथा वैज्ञानिक**/फ़्रेडरिक एंगेल्स	...
13.	**पार्टी कार्य के बारे में**/लेनिन	15.00
14.	**एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे**/लेनिन	60.00
15.	**जनवादी क्रान्ति में सामाजिक-जनवाद के दो रणकौशल**/लेनिन	25.00
16.	**समाजवाद और युद्ध**/लेनिन	20.00
17.	**साम्राज्यवाद : पूँजीवाद की चरम अवस्था**/लेनिन	30.00
18.	**राज्य और क्रान्ति**/लेनिन	40.00
19.	**सर्वहारा क्रान्ति और ग़द्दार काउत्स्की**/लेनिन	15.00
20.	**दूसरे इण्टरनेशनल का पतन**/लेनिन	15.00
21.	**गाँव के ग़रीबों से**/लेनिन	...
22.	**मार्क्सवाद का विकृत रूप तथा साम्राज्यवादी अर्थवाद**/लेनिन	20.00
23.	**कार्ल मार्क्स और उनकी शिक्षा**/लेनिन	20.00
24.	**क्या करें?**/लेनिन	...
25.	**"वामपन्थी" कम्युनिज़्म - एक बचकाना मर्ज़**/लेनिन	...
26.	**पार्टी साहित्य और पार्टी संगठन**/लेनिन	15.00
27.	**जनता के बीच पार्टी का काम**/लेनिन	70.00
28.	**धर्म के बारे में**/लेनिन	20.00
29.	**तोल्स्तोय के बारे में**/लेनिन	10.00
30.	**मार्क्सवाद की मूल समस्याएँ**/जी. प्लेख़ानोव	30.00
31.	**जुझारू भौतिकवाद**/प्लेख़ानोव	35.00
32.	**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**/स्तालिन	50.00
33.	**सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास**	90.00
34.	**माओ त्से-तुङ की रचनाएँ : प्रतिनिधि चयन** (एक खण्ड में)	...
35.	**कम्युनिस्ट जीवनशैली और कार्यशैली के बारे में**/माओ त्से-तुङ	...
36.	**सोवियत अर्थशास्त्र की आलोचना**/माओ त्से-तुङ	35.00
37.	**दर्शन विषयक पाँच निबन्ध**/माओ त्से-तुङ	70.00
38.	**कला-साहित्य विषयक एक भाषण और पाँच दस्तावेज़** / माओ त्से-तुङ	15.00
39.	**माओ त्से-तुङ की रचनाओं के उद्धरण**	50.00

अन्य मार्क्सवादी साहित्य

1.	**राजनीतिक अर्थशास्त्र, मार्क्सवादी अध्ययन पाठ्यक्रम** नयी	300.00
2.	**ख्रुश्चेव झूठा था**/ग्रोवर फ़र	300.00
3.	**राजनीतिक अर्थशास्त्र के मूलभूत सिद्धान्त** (दो खण्डों में) (दि शंघाई टेक्स्टबुक ऑफ़ पोलिटिकल इकोनॉमी)	160.00
4.	**पेरिस कम्यून की शिक्षाएँ** (सचित्र) एलेक्ज़ेण्डर ट्रैक्टनबर्ग	10.00
5.	**कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र**/डी. रियाज़ानोव (विस्तृत व्याख्यात्मक टिप्पणियों सहित)	100.00
6.	**द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद**/डेविड गेस्ट	...
7.	**महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति : चुने हुए दस्तावेज़ और लेख** (खण्ड 1)	35.00
8.	**इतिहास ने जब करवट बदली**/विलियम हिण्टन	25.00
9.	**द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद**/वी. अदोरात्स्की	50.00
10.	**अक्टूबर क्रान्ति और लेनिन**/अल्बर्ट रीस विलियम्स (महत्त्वपूर्ण नयी सामग्री और अनेक नये दुर्लभ चित्रों से सज्जित परिवर्द्धित संस्करण)	90.00
11.	**सोवियत संघ में पूँजीवाद की पुनर्स्थापना**/मार्टिन निकोलस	50.00

राहुल साहित्य

1.	**तुम्हारी क्षय**/राहुल सांकृत्यायन	40.00
2.	**दिमाग़ी ग़ुलामी**/राहुल सांकृत्यायन	...
3.	**वैज्ञानिक भौतिकवाद**/राहुल सांकृत्यायन	65.00
4.	**राहुल निबन्धावली**/राहुल सांकृत्यायन	50.00
5.	**स्तालिन : एक जीवनी**/राहुल सांकृत्यायन	150.00

परम्परा का स्मरण

1.	**चुनी हुई रचनाएँ**/गणेशशंकर विद्यार्थी	100.00
2.	**सलाखों के पीछे से**/गणेशशंकर विद्यार्थी	30.00
3.	**ईश्वर का बहिष्कार**/राधामोहन गोकुलजी	30.00
4.	**लौकिक मार्ग**/राधामोहन गोकुलजी	20.00
5.	**धर्म का ढकोसला**/राधामोहन गोकुलजी	30.00
6.	**स्त्रियों की स्वाधीनता**/राधामोहन गोकुलजी	30.00

जीवनी और संस्मरण

1.	**कार्ल मार्क्स जीवन और शिक्षाएँ**/ज़ेल्डा कोट्स	25.00
2.	**फ़्रेडरिक एंगेल्स : जीवन और शिक्षाएँ**/ज़ेल्डा कोट्स	...
3.	**कार्ल मार्क्स : संस्मरण और लेख**	...
4.	**अदम्य बोल्शेविक नताशा** (एक स्त्री मज़दूर संगठनकर्ता की संक्षिप्त जीवनी)/एल. काताशेवा	30.00
5.	**लेनिन कथा**/मरीया प्रिलेज़ायेवा	70.00
6.	**लेनिन विषयक कहानियाँ**	75.00
7.	**लेनिन के जीवन के चन्द पन्ने**/लीदिया फ़ोतियेवा	...
8.	**स्तालिन : एक जीवनी**/राहुल सांकृत्यायन	150.00

विविध

1.	**फाँसी के तख़्ते से**/जूलियस फ़्यूचिक	30.00
2.	**पाप और विज्ञान**/डायसन कार्टर	100.00
3.	**सापेक्षिकता सिद्धान्त क्या है?**/लेव लन्दाऊ, यूरी रूमेर	....

मुक्तिकामी छात्रों-युवाओं का

आह्वान

सम्पादकीय कार्यालय

बी-100, मुकुन्द विहार, करावल नगर,
दिल्ली-110094

एक प्रति : 20 रुपये • वार्षिक : 160 रुपये (डाकव्यय सहित)

Rahul Foundation

MARXIST CLASSICS

KARL MARX

1.	**A Contribution to the Critique of Political Economy**	100.00
2.	**The Civil War in France**	80.00
3.	**The Eighteenth Brumaire of Louis Bonaparte**	40.00
4.	**Critique of the Gotha Programme**	25.00
5.	**Preface and Introduction to A Contribution to the Critique of Political Economy**	25.00
6.	**The Poverty of Philosophy**	80.00
7.	**Wages, Price and Profit**	35.00
8.	**Class Struggles in France**	50.00

FREDERICK ENGELS

9.	**The Peasant War in Germany**	70.00
10.	**Ludwig Feuerbach and the End of Classical German Philosophy**	65.00
11.	**On Capital**	55.00
12.	**The Origin of the Family, Private Property and the State**	100.00
13.	**Socialism: Utopian and Scientific**	60.00
14.	**On Marx**	20.00
15.	**Principles of Communism**	5.00

MARX and ENGELS

16.	**Historical Writings** (Set of 2 Vols.)	700.00
17.	**Manifesto of the Communist Party**	50.00
18.	**Selected Letters**	40.00

V. I. LENIN

19.	**Theory of Agrarian Question**	160.00
20.	**The Collapse of the Second International**	25.00
21.	**Imperialism, the Highest Stage of Capitalism**	80.00
22.	**Materialism and Empirio-Criticism**	150.00

23.	**Two Tactics of Social-Democracy in the Democratic Revolution**	55.00
24.	**Capitalism and Agriculture**	30.00
25.	**A Characterisation of Economic Romanticism**	50.00
26.	**On Marx and Engels**	35.00
27.	**"Left-Wing" Communism, An Infantile Disorder**	40.00
28.	**Party Work in the Masses**	55.00
29.	**The Proletarian Revolution and the Renegade Kautsky**	40.00
30.	**One Step Forward, Two Steps Back**	...
31.	**The State and Revolution**	...

MARX, ENGELS and LENIN

32.	**On the Dictatorship of Proletariat, *Questions and Answers***	50.00
33.	**On the Dictatorship of the Proletariat: *Selected Expositions***	10.00

PLEKHANOV

34.	**Fundamental Problems of Marxism**	35.00

J. STALIN

35.	**Marxism and Problems of Linguistics**	25.00
36.	**Anarchism or Socialism?**	25.00
37.	**Economic Problems of Socialism in the USSR**	30.00
38.	**On Organisation**	15.00
39.	**The Foundations of Leninism**	40.00
40.	**The Essential Stalin** *Major Theoretical Writings 1905–52* (Edited and with an Introduction by Bruce Franklin)	175.00

LENIN and STALIN

41.	**On the Party**	...

MAO TSE-TUNG

42.	**Five Essays on Philosophy**	50.00
43.	**A Critique of Soviet Economics**	70.00
44.	**On Literature and Art**	80.00

45. **Selected Readings from the Works of Mao Tse-tung** ...

46. **Quotations from the Writings of Mao Tse-tung** ...

OTHER MARXISM

1. **Political Economy, *Marxist Study Courses*** (Prepared by the British Communist Party in the 1930s) 275.00
2. **Fundamentals of Political Economy** (The Shanghai Textbook) 160.00
3. **Reader in Marxist Philosophy**/ *Howard Selsam & Harry Martel* ...
4. **Socialism and Ethics**/*Howard Selsam* ...
5. **What Is Philosophy?** (A Marxist Introduction)**/** *Howard Selsam* 75.00
6. **Reader's Guide to Marxist Classics/***Maurice Cornforth* 70.00
7. **From Marx to Mao Tse-tung /**George Thomson ...
8. **Capitalism and After/**George Thomson ...
9. **The Human Essence/**George Thomson 65.00
10. **Mao Tse-tung's Immortal Contributions/***Bob Avakian* 125.00
11. **A Basic Understanding of the Communist Party** (Written during the GPCR in China) 150.00
12. **The Lessons of the Paris Commune/** *Alexander Trachtenberg (Illustrated)* 15.00

BIOGRAPHIES & REMINISCENCES

1. **Reminiscences of Marx and Engels** (Collection) ...
2. **Karl Marx And Frederick Engels:** An Introduction to their Lives and Work/David Riazanov ...
3. **Joseph Stalin: A Political Biography** *by The Marx-Engels-Lenin Institute* ...

PROBLEMS OF SOCIALISM

1. **How Capitalism was Restored in the Soviet Union, And What This Means for the World Struggle (Red Papers 7)** 175.00

2. **Preface of Class Struggles in the USSR** / *Charles Bettelheim* 30.00
3. **Nepalese Revolution: History, Present Situation and Some Points, Some Thoughts on the Road Ahead** / Alok Ranjan 75.00
4. **Problems of Socialism, Capitalist Restoration and the Great Proletarian Cultural Revolution** / *Shashi Prakash* 40.00

ON THE CULTURAL REVOLUTION

1. **Hundred Day War:** The Cultural Revolution At Tsinghua University / *William Hinton* ...
2. **The Cultural Revolution at Peking University** / *Victor Nee* with *Don Layman* 30.00
3. **Mao Tse-tung's Last Great Battle** / *Raymond Lotta* 25.00
4. **Turning Point in China** / *William Hinton* ...
5. **Cultural Revolution and Industrial Organization in China** / *Charles Bettelheim* 55.00
6. **They Made Revolution Within the Revolution /** *Iris Hunter* ...

ON SOCIALIST CONSTRUCTION

1. **Away With All Pests:** An English Surgeon in People's China: 1954–1969 */ Joshua S. Horn* ...
2. **Serve The People:** Observations on Medicine in the People's Republic of China /*Victor W. Sidel* and *Ruth Sidel* ...
3. **Philosophy is No Mystery** (Peasants Put Their Study to Work) 35.00

CONTEMPORARY ISSUES

1. **Caste and Class: A Marxist Viewpoint /** Ranganayakamma 60.00

DAYITVABODH REPRINT SERIES

1. **Immortal are the Flames of Proletarian Struggles /** *Deepayan Bose* 15.00

2. **Problems of Socialism, Capitalist Restoration and the Great Proletarian Cultural Revolution** / *Shashi Prakash* 40.00
3. **Why Maoism?** / *Shashi Prakash* 25.00

AHWAN REPRINT SERIES

1. **Where Should Students and Youth Make a New Beginning?**
2. **Reservation: Support, Opposition and Our Position** 20.00
3. **On Terrorism : Illusion and Reality** / *Alok Ranjan* 15.00

BIGUL REPRINT SERIES

1. **Still Ablaze is the Torch of October Revolution** 20.00
2. **Nepalese Revolution History, Present Situation and Some Points, Some Thoughts on the Road Ahead** / Alok Ranjan 75.00

WOMEN QUESTION

1. **The Emancipation of Women** / *V. I. Lenin* ...
2. **Breaking All Tradition's Chains: Revolutionary Communism and Women's Liberation** /*Mary Lou Greenberg*...

MISCELLANEOUS

1. **Probabilities of the Quantum World** / *Daniel Danin* ...
2. **An Appeal to the Young** / *Peter Kropotkin* 15.00

मज़दूरों का इन्क़लाबी मासिक अख़बार

मजदूर बिगुल

एक प्रति : 5 रुपये
वार्षिक : 70 रुपये
(डाक व्यय सहित)

सम्पादकीय कार्यालय
69 ए–1, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड,
निशातगंज, लखनऊ–226006
फ़ोन : 0522–4108495
ईमेल : bigulakhbar@gmail.com
वेबसाइट : **mazdoorbigul.net**

अरविन्द स्मृति न्यास के प्रकाशन

1. **इक्कीसवीं सदी में भारत का मज़दूर आन्दोलनः निरन्तरता और परिवर्तन, दिशा और सम्भावनाएँ, समस्याएँ और चुनौतियाँ**
(द्वितीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी के आलेख) 40.00
2. **भारत में जनवादी अधिकार आन्दोलनः दिशा, समस्याएँ और चुनौतियाँ**
(तृतीय अरविन्द स्मृति संगोष्ठी के आलेख) 80.00
3. **जाति प्रश्न और मार्क्सवाद**
(चतुर्थ अरविन्द स्मृति संगोष्ठी के आलेख) 150.00

PUBLICATIONS FROM ARVIND MEMORIAL TRUST

1. **Working Class Movement in the Twenty-First Century: Continuity and Change, Orientation and Possibilities, Problems and Challenges** (Papers presented in the Second Arvind Memorial Seminar) 40.00
2. **Democratic Rights Movement in India: Orientation, Problems and Challenges** (Papers presented in the Third Arvind Memorial Seminar) 80.00
3. **Caste Question and Marxism** (Papers presented in the Fourth Arvind Memorial Seminar) 200.00

जनचेतना

एक वैचारिक मुहिम है
भविष्य-निर्माण का एक प्रोजेक्ट है
वैकल्पिक मीडिया की एक सशक्त धारा है।

परिकल्पना प्रकाशन, राहुल फ़ाउण्डेशन, अनुराग ट्रस्ट, अरविन्द स्मृति न्यास, शहीद भगतसिंह यादगारी प्रकाशन, दस्तक प्रकाशन और प्रांजल आर्ट पब्लिशर्स की पुस्तकों की 'जनचेतना' मुख्य वितरक है। ये प्रकाशन पाँच स्त्रोतों - सरकार, राजनीतिक पार्टियों, कॉरपोरेट घरानों, बहुराष्ट्रीय निगमों और विदेशी फ़ण्डिंग एजेंसियों से किसी भी प्रकार का अनुदान या वित्तीय सहायता लिये बिना जनता से जुटाये गये संसाधनों के आधार पर आज के दौर के लिए ज़रूरी व महत्त्वपूर्ण साहित्य बेहद सस्ती दरों पर उपलब्ध कराने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

अनुराग ट्रस्ट

1.	**बच्चों के लेनिन**	35.00
2	**Stories About Lenin**	35.00
3.	**सच से बड़ा सच**/रवीन्द्रनाथ ठाकुर	25.00
4.	**औज़ारों की कहानियाँ**	20.00
5.	**गुड़ की डली**/कात्यायनी	20.00
6.	**फूल कुंडलाकार क्यों होते हैं**/सनी	20.00
7.	**धरती और आकाश**/अ. वोल्कोव	120.00
8.	**कजाकी**/प्रेमचन्द	35.00
9.	**नीला प्याला**/अरकादी गैदार	40.00
10.	**गड़रिये की कहानियाँ**/क़यूम तंगरीकुलीयेव	35.00
11.	**चींटी और अन्तरिक्ष यात्री**/अ. मित्यायेव	35.00
12.	**अन्धविश्वासी शेकी टेल**/सेर्गेई मिखाल्कोव	20.00
13.	**चलता-फिरता हैट**/एन. नोसोव, होल्कर पुक्क	20.00
14.	**चालाक लोमड़ी** (लोककथा)	20.00
15.	**दियांका-टॉमचिक**	20.00
16.	**गधा और ऊदबिलाव**/मक्सिम गोर्की, सेर्गेई मिखाल्कोव	20.00
17.	**गुफा मानवों की कहानियाँ**/मैरी मार्स	...
18.	**हम सूरज को देख सकते हैं**/मिकोला गिल, दायर स्लावकोविच	20.00
19.	**मुसीबत का साथी**/सेर्गेई मिखाल्कोव	20.00
20.	**नन्हे आर्थर का सूरज**/हद्याक ग्युलनज़रयान, गेलीना लेबेदेवा	20.00
22.	**आकाश में मौज-मस्ती**/चिनुआ अचेबे	20.00
23.	**ज़िन्दगी से प्यार** (दो रोमांचक कहानियाँ)/जैक लण्डन	40.00
24.	**एक छोटे लड़के और एक छोटी लड़की की कहानी**/मक्सिम गोर्की	20.00
25.	**बहादुर**/अमरकान्त	15.00
26.	**बुन्नू की परीक्षा** (सचित्र रंगीन)/शस्या हर्ष	...

27.	**दान्को का जलता हुआ हृदय**/मक्सिम गोर्की	15.00
28.	**नन्हा राजकुमार**/आतुआन द सैंतेक्ज़ूपेरी	40.00
29.	**दादा आर्खिप और ल्योंका**/मक्सिम गोर्की	30.00
30.	**सेमागा कैसे पकड़ा गया**/मक्सिम गोर्की	15.00
31.	**बाज़ का गीत**/मक्सिम गोर्की	15.00
32.	**वांका**/अन्तोन चेख़व	15.00
33.	**तोता**/रवीन्द्रनाथ टैगोर	15.00
34.	**पोस्टमास्टर**/रवीन्द्रनाथ टैगोर	...
35.	**काबुलीवाला**/रवीन्द्रनाथ टैगोर	20.00
36.	**अपना-अपना भाग्य**/जैनेन्द्र	15.00
37.	**दिमाग़ कैसे काम करता है**/किशोर	25.00
38.	**रामलीला**/प्रेमचन्द	15.00
39.	**दो बैलों की कथा**/प्रेमचन्द	25.00
40.	**ईदगाह**/प्रेमचन्द	...
41.	**लॉटरी**/प्रेमचन्द	20.00
42.	**गुल्ली-डण्डा**/प्रेमचन्द	...
43.	**बड़े भाई साहब**/प्रेमचन्द	20.00
44.	**मोटेराम शास्त्री**/प्रेमचन्द	...
45.	**हार की जीत**/सुदर्शन	...
46.	**इवान**/व्लादीमिर बोगोमोलोव	40.00
47.	**चमकता लाल सितारा**/ली शिन-थ्येन	55.00
48.	**उल्टा दरख़्त**/कृश्नचन्दर	35.00
49.	**हरामी**/मिखाईल शोलोख़ोव	25.00
50.	**दोन किहोते** /सर्वान्तेस (नाट्य रूपान्तर - नीलेश रघुवंशी)	...
51.	**आश्चर्यलोक में एलिस** /लुइस कैरोल (नाट्य रूपान्तर - नीलेश रघुवंशी)	30.00
52.	**झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई**/वृन्दावनलाल वर्मा (नाट्य रूपान्तर - नीलेश रघुवंशी)	35.00
53.	**नन्हे गुदड़ीलाल के साहसिक कारनामे**/सुन यओच्युन	...
54.	**लाखी**/अन्तोन चेख़व	25.00
55.	**बेझिन चरागाह**/इवान तुर्गनेव	12.00

56.	**हिरनौटा**/द्मीत्री मामिन सिबिर्याक	25.00
57.	**घर की ललक**/निकोलाई तेलेशोव	10.00
58.	**बस एक याद**/लेओनीद अन्द्रेयेव	20.00
59.	**मदारी**/अलेक्सान्द्र कुप्रिन	35.00
60.	**पराये घोंसले में**/फ़्योदोर दोस्तोयेव्स्की	20.00
61.	**कोहकाफ़ का बन्दी**/तोल्सतोय	30.00
62.	**मनमानी के मज़े**/सेर्गेई मिखाल्कोव	30.00
63.	**सदानन्द की छोटी दुनिया**/सत्यजीत राय	15.00
64.	**छत पर फँस गया बिल्ला**/विताउते जिलिन्सकाइते	35.00
65.	**गोलू के कारनामे**/रामबाबू	25.00
66.	**दो साहसिक कहानियाँ**/होल्गार पुक्क	15.00
67.	**आम ज़िन्दगी की मज़ेदार कहानियाँ**/होल्गार पुक्क	20.00
68.	**कंगूरे वाले मकान का रहस्यमय मामला**/होल्गार पुक्क	20.00
69.	**रोज़मर्रे की कहानियाँ**/होल्गार पुक्क	20.00
70.	**अजीबोग़रीब क़िस्से**/होल्गार पुक्क	...
71.	**नये ज़माने की परीकथाएँ**/होल्गार पुक्क	25.00
72.	**किस्सा यह कि एक देहाती ने दो अफ़सरों का कैसे पेट भरा**/मिखाइल सल्तिकोव-श्चेद्रिन	15.00
73.	**पश्चदृष्टि-भविष्यदृष्टि** (लेख संकलन)/ कमला पाण्डेय	30.00
74.	**यादों के घेरे में अतीत** (संस्मरण)/ कमला पाण्डेय	100.00
75.	**हमारे आसपास का अँधेरा** (कहानियाँ)/ कमला पाण्डेय	60.00
76.	**कालमन्थन** (उपन्यास)/ कमला पाण्डेय	60.00

कोंपल

बच्चों के समग्र वैज्ञानिक और सांस्कृतिक विकास के लिए समर्पित अनुराग ट्रस्ट की त्रैमासिक पत्रिका

डी-68, निराला नगर, लखनऊ-226020

एक प्रति : 20 रुपये,

वार्षिक : 100 रुपये (डाकव्यय सहित)

ਪੰਜਾਬੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ

ਦਸਤਕ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ

ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ ਦਾ ਸਵੈ-ਜੀਵਨੀ ਨਾਵਲ (ਤਿੰਨ ਭਾਗਾਂ ਵਿੱਚ)

1. ਮੇਰਾ ਬਚਪਨ	130.00
2. ਮੇਰੇ ਵਿਸ਼ਵ-ਵਿਦਿਆਲੇ	100.00
3. ਮੇਰੇ ਸ਼ਗਿਰਦੀ ਦੇ ਦਿਨ	200.00

4. ਪ੍ਰੇਮ, ਪ੍ਰੰਪਰਾ ਅਤੇ ਵਿਦਰੋਹ / ਕਾਤਿਆਈਨੀ	20.00
5. ਥੀਏਟਰ ਦਾ ਸੰਖੇਪ ਤਰਕਸ਼ਾਸਤਰ / ਬ੍ਰੈਖ਼ਤ	15.00
6. ਆਈਜੇਂਸਤਾਈਨ ਦਾ ਫਿਲਮ ਸਿਧਾਂਤ	15.00
7. ਮਜ਼ਦੂਰ ਜਮਾਤੀ ਸੰਗੀਤ ਰਚਨਾਵਾਂ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ	10.00
8. ਪਹਿਲਾ ਅਧਿਆਪਕ / ਚੰਗੇਜ਼ ਆਇਤਮਾਤੋਵ (ਨਾਵਲ)	25.00
9. ਸ਼ਾਂਤ ਸਰਘੀ ਵੇਲਾ / ਬੋਰਿਸ ਵਾਸੀਲਿਯੇਵ (ਨਾਵਲ)	30.00
10. ਭਾਂਜ / ਅਲੈਗਜ਼ਾਂਦਰ ਫ਼ਦੇਯੇਵ (ਨਾਵਲ)	100.00
11. ਫੌਲਾਦੀ ਹੜ / ਅਲੈਗਜ਼ਾਂਦਰ ਸਰਾਫ਼ੀਮੋਵਿਚ (ਨਾਵਲ)	100.00
12. ਇਕਤਾਲ਼ੀਵਾਂ / ਬੋਰਿਸ ਲਵਰੇਨਿਓਵ (ਨਾਵਲ)	30.00
13. ਮਾਂ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ (ਨਾਵਲ)	180.00
14. ਪੀਲ਼ੇ ਦੈਂਤ ਦਾ ਸ਼ਹਿਰ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ	80.00
15. ਸਾਹਿਤ ਬਾਰੇ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ	200.00
16. ਅਸਲੀ ਇਨਸਾਨ ਦੀ ਕਹਾਣੀ / ਬੋਰਿਸ ਪੋਲੇਵਾਈ (ਨਾਵਲ)	200.00
17. ਅੱਠੇ ਪਹਿਰ (ਕਹਾਣੀਆਂ)	125.00
18. ਬਘਿਆੜਾਂ ਦੇ ਵੱਸ / ਬਰੂਨੋ ਅਪਿਤਜ (ਨਾਵਲ)	100.00
19. ਮੀਤ੍ਰਿਆ ਕੋਕੋਰ / ਮੀਹਾਇਲ ਸਾਦੋਵਿਆਨੋ (ਨਾਵਲ)	100.00
20. ਇਨਕਲਾਬ ਲਈ ਜੂਝੀ ਜਵਾਨੀ	150.00
21. ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਦਿਆਂ ਦਿਲ ਆਪਣਾ ਮੈਂ / ਵ. ਸੁਖੋਮਲਿੰਸਕੀ	150.00
22. ਫਾਸੀ ਦੇ ਤਖ਼ਤੇ ਤੋਂ / ਜੂਲੀਅਸ ਫੂਚਿਕ (ਨਾਵਲ)	50.00
23. ਭੁੱਬਲ / ਫ਼ਰੰਜ਼ਦ ਅਲੀ (ਪਾਕਿਸਤਾਨੀ ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਨਾਵਲ)	200.00
24. ਸਭ ਤੋਂ ਖਤਰਨਾਕ... (ਪਾਸ਼ ਦੀ ਸਮੁੱਚੀ ਉਪਲੱਬਧ ਸ਼ਾਇਰੀ)	200.00
25. ਧਰਤੀ ਧਨ ਨਾ ਆਪਣਾ / ਜਗਦੀਸ਼ ਚੰਦਰ	250.00

ਸ਼ਹੀਦ ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਯਾਦਗਾਰੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ

1. ਉਜਰਤ, ਕੀਮਤ ਅਤੇ ਮੁਨਾਫਾ / ਮਾਰਕਸ	30.00
2. ਉਜਰਤੀ ਕਿਰਤ ਅਤੇ ਸਰਮਾਇਆ / ਮਾਰਕਸ	20.00
3. ਸਿਆਸੀ ਆਰਥਿਕਤਾ ਦੀ ਅਲੋਚਨਾ ਵਿੱਚ ਯੋਗਦਾਨ / ਮਾਰਕਸ	125.00
4. ਲੂਈ ਬੋਨਾਪਾਰਟ ਦੀ ਅਠਾਰਵੀਂ ਬਰੂਮੇਰ / ਮਾਰਕਸ	50.00
5. ਪੂੰਜੀ ਦੀ ਉਤਪਤੀ / ਮਾਰਕਸ	45.00
6. ਰਿਹਾਇਸ਼ੀ ਘਰਾਂ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਏਂਗਲਜ਼	35.00
7. ਫਿਊਰਬਾਖ : ਪਾਦਰਥਵਾਦੀ ਅਤੇ ਆਦਰਸ਼ਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣਾਂ ਦਾ ਵਿਰੋਧ / ਮਾਰਕਸ-ਏਂਗਲਜ਼	60.00
8. ਜਰਮਨੀ ਵਿੱਚ ਇਨਕਲਾਬ ਅਤੇ ਉਲਟ ਇਨਕਲਾਬ / ਏਂਗਲਜ਼	50.00
9. ਮਾਰਕਸ ਦੇ "ਸਰਮਾਇਆ" ਬਾਰੇ / ਏਂਗਲਜ਼	60.00
10. ਫਰਾਂਸ ਅਤੇ ਜਰਮਨੀ 'ਚ ਕਿਸਾਨੀ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਏਂਗਲਜ਼	20.00
11. ਸੋਸ਼ਲਿਜ਼ਮ : ਵਿਗਿਆਨਕ ਅਤੇ ਯੂਟੋਪੀਆਈ / ਏਂਗਲਜ਼	35.00
12. ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਬਾਰੇ / ਏਂਗਲਜ਼	10.00
13. ਲੁਡਵਿਗ ਫਿਊਰਬਾਖ ਅਤੇ ਕਲਾਸੀਕੀ ਜਰਮਨ ਦਰਸ਼ਨ ਦਾ ਅੰਤ / ਏਂਗਲਜ਼	30.00
14. ਟੱਬਰ, ਨਿੱਜੀ ਜਾਇਦਾਦ ਅਤੇ ਰਾਜ ਦੀ ਉੱਤਪਤੀ / ਏਂਗਲਜ਼	65.00
15. ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਅਤੇ ਉਨਾਂ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ / ਲੈਨਿਨ	35.00
16. ਰਾਜ ਅਤੇ ਇਨਕਲਾਬ / ਲੈਨਿਨ	50.00
17. ਦੂਜੀ ਇੰਟਰਨੈਸ਼ਨਲ ਦਾ ਪਤਣ / ਲੈਨਿਨ	45.00
18. ਖੇਤੀ ਵਿੱਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦ / ਲੈਨਿਨ	15.00
19. ਰਾਜ / ਲੈਨਿਨ	10.00
20. ਸਾਮਰਾਜਵਾਦ, ਸਰਮਾਏਦਾਰੀ ਦਾ ਸਰਵਉੱਚ ਪੜਾਅ / ਲੈਨਿਨ	70.00
21. ਇੱਕ ਕਦਮ ਅੱਗੇ ਦੋ ਕਦਮ ਪਿੱਛੇ / ਲੈਨਿਨ	125.00
22. ਲੋਕਾਂ ਵਿੱਚ ਕੰਮ ਕਿਵੇਂ ਕਰੀਏ / ਲੈਨਿਨ	65.00
23. ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਕਲਾ ਬਾਰੇ / ਲੈਨਿਨ	150.00
24. ਸਮਾਜਵਾਦ ਅਤੇ ਜੰਗ / ਲੈਨਿਨ	45.00
25. ਖੱਬੇ ਪੱਖੀ ਕਮਿਊਨਿਜ਼ਮ ਇੱਕ ਬਚਗਾਨਾ ਰੋਗ / ਲੈਨਿਨ	65.00
26. ਅਸੀਂ ਜਿਹੜਾ ਵਿਰਸਾ ਤਿਆਗਦੇ ਹਾਂ / ਲੈਨਿਨ	25.00
27. ਪ੍ਰੋਲੇਤਾਰੀ ਇਨਕਲਾਬ ਅਤੇ ਭਗੌੜਾ ਕਾਊਤਸਕੀ / ਲੈਨਿਨ	70.00
28. ਆਰਥਕ ਰੋਮਾਂਚਵਾਦ ਦਾ ਚਰਿੱਤਰ ਚਿੱਤਰਣ / ਲੈਨਿਨ	50.00

29.	ਸੁਤੰਤਰ ਵਪਾਰ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਮਾਰਕਸ, ਏਂਗਲਜ਼, ਲੈਨਿਨ	10.00
30.	ਲੈਨਿਨਵਾਦ ਦੀਆਂ ਨੀਹਾਂ / ਸਟਾਲਿਨ	20.00
31.	ਫ਼ਲਸਫਾਨਾ ਲਿਖਤਾਂ / ਮਾਓ-ਜ਼ੇ-ਤੁੰਗ	25.00
32.	ਸੋਵੀਅਤ ਅਰਥਸ਼ਾਸਤਰ ਦੀ ਅਲੋਚਨਾ / ਮਾਓ-ਜ਼ੇ-ਤੁੰਗ	60.00
33.	ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਦੇ ਬੁਨਿਆਦੀ ਮਸਲੇ / ਪਲੈਖਾਨੋਵ	40.00
34.	ਰਾਜਨੀਤਕ ਅਰਥਸ਼ਾਸਤਰ ਦੇ ਮੂਲ ਸਿਧਾਂਤ	60.00
35.	ਫਿਲਾਸਫੀ ਕੋਈ ਗੋਰਖਧੰਦਾ ਨਹੀਂ	10.00
36.	ਦਵੰਦਵਾਦ ਜ਼ਰੀਏ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਸੇਵਾ	10.00
37.	ਇਤਿਹਾਸ ਨੇ ਜਦ ਕਰਵਟ ਬਦਲੀ	40.00
38.	ਇਨਕਲਾਬ ਅੰਦਰ ਇਨਕਲਾਬ	20.00
39.	ਮਾਓ-ਜ਼ੇ-ਤੁੰਗ ਦੀ ਅਮਿੱਟ ਦੇਣ	125.00
40.	ਚੀਨ ਵਿੱਚ ਉਲਟ ਇਨਕਲਾਬ ਅਤੇ ਮਾਓ ਦਾ ਇਨਕਲਾਬੀ ਵਿਰਸਾ	60.00
41.	ਮਾਓਵਾਦੀ ਅਰਥਸ਼ਾਸਤਰ ਅਤੇ ਸਮਾਜਵਾਦ ਦਾ ਭਵਿੱਖ	60.00
42.	ਲੈਨਿਨ ਦੀ ਜੀਵਨ ਕਹਾਣੀ	100.00
43.	ਅਡੋਲ ਬਾਲਸ਼ਵਿਕ ਨਤਾਸ਼ਾ	30.00
44.	ਮਾਰਕਸ ਅਤੇ ਏਂਗਲਜ਼ ਆਪਣੇ ਸਮਕਾਲੀਆਂ ਦੀਆਂ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿੱਚ	75.00
45.	ਪੈਰਿਸ ਕਮਿਊਨ ਦੀ ਅਮਰ ਕਹਾਣੀ	10.00
46.	ਬੁਝ ਨਹੀਂ ਸਕਦੀ ਅਕਤੂਬਰ ਇਨਕਲਾਬ ਦੀ ਮਸ਼ਾਲ	10.00
47.	ਦਹਿਸ਼ਤਗਰਦੀ ਬਾਰੇ ਭਰਮ ਅਤੇ ਯਥਾਰਥ	10.00
48.	ਪੰਜਾਬ ਦਾ ਕਿਸਾਨ ਅੰਦੋਲਨ ਅਤੇ ਕਮਿਊਨਿਸਟ ਲਹਿਰ	10.00
49.	ਜੰਗਲਨਾਮਾ : ਇੱਕ ਰਾਜਨੀਤਕ ਪੜਚੋਲ	10.00
50.	ਭਾਰਤੀ ਖੇਤੀ ਵਿੱਚ ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਵਿਕਾਸ	20.00
51.	ਅਮਿੱਟ ਹਨ ਮਜ਼ਦੂਰ ਸੰਗਰਾਮਾਂ ਦੀਆਂ ਚਿਣਗਾਂ	10.00
52.	ਸਮਾਜਵਾਦ ਦੀਆਂ ਸਮੱਸਿਆਵਾਂ, ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਦੀ ਮੁੜ ਬਹਾਲੀ ਅਤੇ ਮਹਾਨ ਪ੍ਰੋਲੇਤਾਰੀ ਸੱਭਿਆਚਾਰ ਇਨਕਲਾਬ	20.00
53.	ਕਿਉਂ ਮਾਓਵਾਦ ?	10.00
54.	ਸੋਵੀਅਤ ਯੂਨੀਅਨ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਬਾਰੇ ਪ੍ਰਚਾਰੇ ਜਾਂਦੇ ਝੂਠ	10.00
55.	ਰਿਜ਼ਰਵੇਸ਼ਨ : ਪੱਖ, ਵਿਪੱਖ ਅਤੇ ਤੀਸਰਾ ਪੱਖ	5.00
56.	ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਅਤੇ ਜਾਤ ਦਾ ਸਵਾਲ / ਸੁਖਵਿੰਦਰ	20.00

57. ਮਾਰਕਸਵਾਦ ਬਾਰੇ ਅੰਬੇਡਕਰ ਦੇ ਵਿਚਾਰ / ਰੰਗਾਨਾਇਕੰਮਾ 15.00
58. ਡਾ. ਅੰਬੇਡਕਰ ਅਤੇ ਭਾਰਤ ਦਾ ਸੰਵਿਧਾਨ / ਰੰਗਾਨਾਇਕੰਮਾ 15.00
59. ਡਾ. ਅੰਬੇਡਕਰ : ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਵਿਚਾਰ / ਰੰਗਾਨਾਇਕੰਮਾ 10.00
60. ਭਾਰਤ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਜਾਤ-ਪਾਤ / ਪ੍ਰੋ. ਇਰਫ਼ਾਨ ਹਬੀਬ 10.00
61. ਉਦਾਰਵਾਦੀ ਨੀਤੀਆਂ ਦੇ 18 ਸਾਲ 5.00
62. ਚੋਰ, ਭ੍ਰਿਸ਼ਟ ਅਤੇ ਅਯਾਸ਼ ਨੇਤਾਸ਼ਾਹੀ 5.00
63. ਪਾਪ ਅਤੇ ਵਿਗਿਆਨ / ਡਾਈਸਨ ਕਾਰਟਰ 60.00
64. ਫਾਸੀਵਾਦ ਕੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਨਾਲ਼ ਕਿਵੇਂ ਲੜੀਏ ? 15.00
65. ਆਈਨਸਟੀਨ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਸਰੋਕਾਰ 10.00
66. ਨੌਜਵਾਨਾਂ ਨਾਲ਼ ਦੋ ਗੱਲਾਂ / ਪੀਟਰ ਕ੍ਰੋਪੋਟਕਿਨ 10.00
67. ਇਨਕਲਾਬ ਦਾ ਸੁਨੇਹਾ
(ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਅਤੇ ਸਾਥੀਆਂ ਦੀਆਂ ਲਿਖਤਾਂ) 30.00
68. ਅਜਿਹਾ ਸੀ ਸਾਡਾ ਭਗਤ ਸਿੰਘ / ਸ਼ਿਵ ਵਰਮਾ 10.00
69. ਮੈਂ ਨਾਸਤਿਕ ਕਿਉਂ ਹਾਂ ? / ਭਗਤ ਸਿੰਘ 10.00
70. ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਨੇ ਕਿਹਾ... / ਭਗਤ ਸਿੰਘ 5.00
71. ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਤੇ ਉਸਦੇ ਸਾਥੀਆਂ
ਦਾ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਵਿਕਾਸ / ਪ੍ਰੋ. ਬਿਪਨ ਚੰਦਰਾ 10.00
72. ਇਨਕਲਾਬੀ ਲਹਿਰ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤਕ ਵਿਕਾਸ / ਸ਼ਿਵ ਵਰਮਾ 10.00
73. ਸ਼ਹੀਦ ਚੰਦਰ ਸ਼ੇਖਰ ਆਜ਼ਾਦ / ਭਗਵਾਨ ਦਾਸ ਮਹੌਰ 10.00
74. ਗਦਰੀ ਸੂਰਬੀਰ / ਪ੍ਰੋ. ਰਣਧੀਰ ਸਿੰਘ 10.00
75. ਸ਼ਹੀਦ ਸੁਖਦੇਵ 20.00
76. ਸ਼ਹੀਦ ਕਰਤਾਰ ਸਿੰਘ ਸਰਾਭਾ 5.00
77. ਵਿਦਿਆਰਥੀ ਨੌਜਵਾਨ ਨਵੀਂ ਸ਼ੁਰੂਆਤ ਕਿੱਥੋਂ ਕਰਨ ? 10.00
78. ਸੋਧਵਾਦ ਬਾਰੇ 5.00
79. ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਗਿਆਨ ਪ੍ਰਸਾਰ ਦੀ ਲੋੜ ਕਿਉਂ ? / ਸੁਖਵਿੰਦਰ 15.00
80. ਵਧਦੀ ਅਬਾਦੀ 15.00
81. ਯੁੱਗ ਕਿਵੇਂ ਬਦਲਦੇ ਹਨ ? / ਡਾ. ਅੰਮ੍ਰਿਤ 10.00
82. ਧਰਮ ਬਾਰੇ / ਲੈਨਿਨ 30.00
83. ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਮਾਤ-ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਮਹੱਤਵ 20.00
84. ਇੱਕ ਪ੍ਰਤਿਭਾ ਦਾ ਜਨਮ / ਗੈਨਰਿਖ ਵੋਲਕੋਵ 100.00
85. ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ ਨਵਉਦਾਰਵਾਦ ਦੇ ਦੋ ਦਹਾਕੇ / ਸੁਖਵਿੰਦਰ 20.00

86. ਕਾਰਲ ਮਾਰਕਸ ਦਾ ਕਲਾ ਦਰਸ਼ਨ 200.00
87. ਸਤਾਲਿਨ - ਇੱਕ ਜੀਵਨੀ / ਰਾਹੁਲ ਸਾਂਕਰਤਾਇਨ 150.00
88. ਪੋਰਨੋਗ੍ਰਾਫੀ : ਇਕ ਸਰਮਾਏਦਾਰਾ ਕੋਹੜ / ਅਜੇ ਪਾਲ 10.00
89. ਔਰਤਾਂ ਦੀ ਗੁਲਾਮੀ ਦਾ ਆਰਥਿਕ ਅਧਾਰ / ਸੀਤਾ 10.00

ਅਨੁਰਾਗ ਟਰੱਸਟ (ਬੱਚਿਆਂ ਲਈ)

1. ਇਵਾਨ / ਵਲਾਦੀਮੀ ਬਗਾਮਲੋਵ 35.00
2. ਵਾਂਕਾ / ਅਨਤੋਨ ਚੈਖੋਵ 10.00
3. ਕਿਸਮਤ ਆਪੋ-ਆਪਣੀ / ਜੈਨੇਂਦਰ 20.00
4. ਕੋਹੇਕਾਫ਼ ਦਾ ਕੈਦੀ / ਤਾਲਸਤਾਏ 30.00
5. ਛੱਤ ’ਤੇ ਫਸ ਗਿਆ ਬਿੱਲਾ ਅਤੇ ਹੋਰ ਕਹਾਣੀਆਂ 20.00
6. ਅਜੀਬੋ-ਗਰੀਬ ਕਿੱਸੇ / ਹੋਲਗਰ ਪੁੱਕ 20.00
7. ਦੋ ਹਿੰਮਤੀ ਕਹਾਣੀਆਂ / ਹੋਲਗਰ ਪੁੱਕ 15.00
8. ਨਵੇਂ ਜ਼ਮਾਨੇ ਦੀਆਂ ਪਰੀ-ਕਥਾਵਾਂ / ਹੋਲਗਰ ਪੁੱਕ 20.00
9. ਅਸੀਂ ਸੂਰਜ ਨੂੰ ਵੇਖ ਸਕਦੇ ਹਾਂ / ਮਿਕੋਲ ਗਿੱਲ 10.00
10. ਗੁਫਾ ਮਾਨਵਾਂ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ / ਮੈਰੀ ਮਾਰਸ 20.00
11. ਕਿੱਸਾ ਇਹ ਕਿ ਇੱਕ ਪੇਂਡੂ ਨੇ ਦੋ ਅਫ਼ਸਰ ਸ਼ਹਿਰੀ ਅਫਸਰਾਂ ਦਾ ਢਿੱਡ ਕਿਵੇਂ ਭਰਿਆ / ਮਿਖਾਈਲ ਸ਼ਚੇਦ੍ਰਿਨ 15.00
12. ਸਦਾਨੰਦ ਦੀ ਛੋਟੀ ਦੁਨੀਆਂ / ਸੱਤਿਆਜੀਤ ਰਾਏ 10.00
13. ਬਾਜ਼ ਦਾ ਗੀਤ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ 10.00
14. ਬੱਸ ਇੱਕ ਯਾਦ / ਲਿਓਨਿਦ ਆਂਦਰੇਯੇਵ 10.00
15. ਦਾਦਾ ਅਰਖ਼ੀਪ ਅਤੇ ਲਿਓਨਕਾ / ਗੋਰਕੀ 20.00
16. ਦਾਨਕੋ ਦਾ ਬਲ਼ਦਾ ਹੋਇਆ ਦਿਲ / ਗੋਰਕੀ 10.00
17. ਘਰ ਦੀ ਲਲਕ / ਨਿਕੋਲਾਈ ਤੇਲੇਸ਼ੋਵ 20.00
18. ਗੁੱਲੀ-ਡੰਡਾ / ਪ੍ਰੇਮਚੰਦ 10.00
19. ਹਾਰ ਦੀ ਜਿੱਤ / ਸ਼ੁਦਰਸ਼ਨ 10.00
20. ਹਰਾਮੀ / ਮਿਖ਼ਾਇਲ ਸ਼ੋਲੋਖ਼ੋਵ 20.00
21. ਕਾਬੁਲੀਵਾਲ਼ਾ / ਰਵਿੰਦਰਨਾਥ ਟੈਗੋਰ 10.00
22. ਮੁਸੀਬਤ ਦਾ ਸਾਥੀ / ਸੇਰੇਗਈ ਮਿਖਾਲਕੋਵ 10.00
23. ਪੋਸਟਮਾਸਟਰ / ਰਵਿੰਦਰਨਾਥ ਟੈਗੋਰ 10.00

24. ਰਾਮਲੀਲਾ / ਪ੍ਰੇਮਚੰਦ 10.00
25. ਸੇਮਾਗਾ ਕਿਵੇਂ ਫੜਿਆ ਗਿਆ / ਗੋਰਕੀ 10.00
26. ਤੁਰਦਾ-ਫਿਰਦਾ ਟੋਪ / ਐੱਨ. ਨੋਸੋਵ 10.00
27. ਬੇਜਿਨ ਚਰਾਗਾਹ / ਇਵਾਨ ਤੁਰਗੇਨੇਵ 20.00
28. ਉਲਟਾ ਰੁੱਖ / ਕ੍ਰਿਸ਼ਨਚੰਦਰ 35.00
29. ਵੱਡੇ ਭਾਈ ਸਾਹਬ / ਪ੍ਰੇਮਚੰਦ 10.00
30. ਇੱਕ ਛੋਟੇ ਮੁੰਡੇ ਅਤੇ ਕੁੜੀ ਦੀ ਕਹਾਣੀ ਜਿਹੜੇ ਬਰਫ਼ੀਲੀ ਠੰਡ 'ਚ ਕਾਂਬੇ ਨਾਲ਼ ਮਰੇ ਨਹੀਂ / ਮੈਕਸਿਮ ਗੋਰਕੀ 10.00
31. ਬਹਾਦਰ / ਅਮਰਕਾਂਤ 10.00
32. ਹਿਰਨੋਟਾ / ਦਮਿਤਰੀ ਮਾਮਿਨ ਸਿਬਿਰੇਆਕ 10.00

——::——

नवें समाजवादी इन्क़लाब दा बुलारा

प्रतिबद्ध (तिमाही पंजाबी पत्रिका)

सम्पादकीय कार्यालय : शहीद भगतसिंह भवन
सीलोआनी रोड, रायकोट, लुधियाना- 141109 (पंजाब)
फोन : 09815587807 **ईमेल :** pratibadh08@rediffmail.com
ब्लॉग : http://pratibaddh.wordpress.com

एक अंक : 50 रुपये *वार्षिक सदस्यता :*
डाकसहित : 170 रुपये, दस्ती : 150 रुपये विदेश : 50 अमेरिकी डॉलर या 35 पौण्ड

तब्दीली पसन्द विद्यार्थियाँ-नौजवानाँ दी

ललकार (पाक्षिक पंजाबी अखबार)

सम्पादकीय कार्यालय : *लखविन्दर* सुपुत्र मनजीत सिंह
मुहल्ला - जस्सडाँ, शहर और पोस्ट ऑफ़िस - सरहिन्द शहर,
जिला - फ़तेहगढ़ साहिब-140406 (पंजाब) फोन : 096461 50249
ईमेल : lalkaar08@rediffmail.com **ब्लॉग :** http://lalkaar.wordpress.com

एक अंक : 5 रुपये *वार्षिक सदस्यता :* डाकसहित : 170 रुपये, दस्ती : 120 रुपये

हमारे पास आपको मिलेंगे

- विश्व क्लासिक्स
- स्तरीय प्रगतिशील साहित्य
- भगतसिंह और उनके साथियों का सम्पूर्ण उपलब्ध साहित्य
- मक्सिम गोर्की की पुस्तकों का सबसे बड़ा संग्रह
- भारतीय इतिहास के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण क्रान्तिकारी दस्तावेज़
- मार्क्सवादी साहित्य
- जीवन और समाज की समझ तथा विचारोत्तेजना देने वाला साहित्य
- प्रगतिशील क्रान्तिकारी पत्र-पत्रिकाएँ
- दिमाग़ की खिड़कियाँ खोलने और कल्पना की उड़ानों को पंख देने वाला बाल-साहित्य
- सुन्दर, सुरुचिपूर्ण, प्रेरक पोस्टर और कार्ड
- क्रान्तिकारी गीतों के कैसेट
- साहित्यिक व क्रान्तिकारी उद्धरणों-चित्रों वाली टीशर्ट, कैलेण्डर, बुकमार्क, डायरी आदि ...

ऐसा साहित्य जो सपने देखने और भविष्य-निर्माण के लिए प्रेरित करता है!

(हिन्दी, अंग्रेज़ी, पंजाबी और मराठी में)

किताबें नहीं,
हम आने वाले कल के सपने लेकर आये हैं
किताबें नहीं,
हम असली इन्सान की तरह

जनचेतना

मुख्य केन्द्र : **डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**

फ़ोन : 0522-4108495

अन्य केन्द्र :

- 114, जनता मार्केट, रेलवे बस स्टेशन रोड,
  गोरखपुर-273001, फ़ोन : 7398783835
- दिल्ली : 9999750940
- नियमित स्टॉल : कॉफ़ी हाउस के पास, हज़रतगंज, लखनऊ
  शाम 5 से 8 बजे तक

सहयोगी केन्द्र

- जनचेतना पुस्तक विक्रय केन्द्र, दुकान नं. 8, पंजाबी भवन,
  लुधियाना (पंजाब) फ़ोन : 09815587807

ईमेल : info@janchetnabooks.org

वेबसाइट : www.janchetnabooks.org

हमारी बुकशॉप और प्रदर्शनियों से पुस्तकें लेने के अलावा आप हमसे डाक से भी किताबें मँगा सकते हैं। हमारी वेबसाइट पर जाकर पुस्तक सूची से पुस्तकें चुनें और ईमेल या फोन से हमें ऑर्डर भेज दें। आप मनीऑर्डर या चेक से या सीधे हमारे बैंक खाते में भुगतान कर सकते हैं। आप वेबसाइट पर दिये Instamojo के लिंक से भी भुगतान कर सकते हैं। हमारी किताबें आप Amazon और Flipkart से भी ऑनलाइन मँगा सकते हैं।

बैंक खाते का विवरण:

ACC. NAME: JANCHETNA PUSTAK PRATISHTHAN SAMITI

Acc. No. 0762002109003796

Bank: Punjab National Bank

यदि आपको महज़ मनोरंजन चाहिए,
महज़ नशे की एक ख़ुराक,
दिल को बहलाने के लिए एक ख़याल
तो नहीं हैं ऐसी किताबें हमारे पास।
हम ऐसी किताबें लेकर आये हैं
जो आपकी मोहनिद्रा झकझोरकर तोड़ दें,
जो आज के हालात पर
आपको सोचने के लिए मजबूर कर दें।
हम किताबें नहीं
लड़ने की ज़िद
और हालात की बेहतरी की उम्मीदें
लेकर आये हैं,
हम आने वाले कल के सपने लेकर आये हैं।
हम लेकर आये हैं
एक सार्थक, स्वाभिमानी, मुक्त जीवन की तड़प।
किताबें नहीं
हम असली इंसान की तरह
जीने का संकल्प लेकर आये हैं।

जनचेतना

एक सांस्कृतिक मुहिम
एक वैचारिक प्रोजेक्ट
वैकल्पिक मीडिया का एक मॉडल